॥ श्रीः ॥

महर्षिवेदव्यासप्रणीताग्निपुराणान्तर्गतम्

आयुर्वेदखण्डम् ।

श्रीशालिवाहनकुलावतंसश्रीलालत्रिवे-
णीबहादुरसिंहवर्मकृतवैद्यसंजीवि-
न्याख्यया हिन्दीभाषाव्या-
ख्यया समलङ्कृतम् ।

तदेव

श्रीभगीरथात्मजेन

हरिप्रसादशर्मणा

मुम्बय्यां

मुद्रयित्वा

प्राकाश्यमानीतम्

१९५५–शकाब्दाः १८२०

॥ श्रीः ॥

महर्षिवेदव्यासप्रणीताग्निपुराणान्तर्गतम् ।

आयुर्वेदखण्डम् ।

श्रीशालिवाहनकुलावतंसश्रीलालत्रिवे-
णीबहादुरसिंहवर्मकृतवैद्यसंजीवि-
न्याख्यया हिन्दीभाषाव्या-
ख्यया समलङ्कृतम्

श्रीपं०रघुवंशशर्मणा संशोधितं च ।

तदेव

श्रीभगीरथात्मजेन
हरिप्रसादशर्मणा

मुम्बय्यां

"गणपत कृष्णाख्य" मुद्रणयन्त्रालये मुद्रयित्वा
प्राकाश्यमानीतम्

संवदब्दाः १९५५–शकाब्दाः १८२०

अथानुक्रमणिका।

तृतीयाध्यायारम्भः ॥ ३ ॥

अथ

महर्षिवेदव्यासप्रणीताग्निपुराणान्तर्गतं

आयुर्वेदखण्डम् ।

भाषानुवादसमलङ्कृतम्

भाषाकारकृताः श्लोकाः

कारणमेकं जगतां वारणवक्त्रं निवारणं विपदाम् ॥ दुरित-
विदारणचण्डं ज्ञतेर्लाभाय सिद्धिदम्वन्दे ॥ १ ॥ धन्वन्तरि-
दिवोदास-दस्रात्रेयादिकान्नुमः ॥ येषां ध्यानाग्निना दग्धा
रोगकक्षविपक्षकाः ॥ १ ॥ वंशेऽभूत्प्रथितयशो वसन्तवर्म्मा
विक्रान्तो वशमनयत्सपत्नवर्गम् ॥ यः कृत्वा हरिहरमन्दिरे
प्रयागे सायुज्यं ह्यलभत शालिवाहनीये ॥ ३ ॥ तत्पुत्रोऽद्य
विराजते नृपपदे दिष्टप्रधानो वशी शम्भोः सेरहादुरः प्रण-
तिभिः प्राप्तः पदं पैतृकम् ॥ दुर्हृत्कक्षहुताशनो हिमकरो मित्रो-
त्पलानां सदा वारस्त्रीविमुखः स्वदारनिरतः शैवप्रधानः
कृती ॥ ४ ॥ तस्यात्मजोऽखिलबुधातिगशेमुषी त्रिवेणीबहा-
दुरशिवार्चनसक्तचित्तः ॥ वाग्भट्टसुश्रुतमुखान्बहुधा विगाह्य
लोकोपकारमनसैव चिकित्सति स्म ॥ ५ ॥ दृष्टम्वह्निपुराणे
हि समासोक्तं महर्षिभिः ॥ आयुर्वेदं बहुविधं न दृष्टं मुद्रितं
पृथक् ॥ ६ ॥ तन्मुद्रणं भवेत्स्वच्छटीकया भाषया सह ॥
चिकित्सकमुदे रोगिहिताय यशसे मम ॥ ७ ॥ इत्येव
विमृशन्सोऽहं यदुनाथेन शर्मणा ॥ प्रोत्साहितो विशेषेण

गङ्गाधरसहायवान् ॥ ८ ॥ वैद्यसञ्जीवनीं नाम कुर्वे टीकां स्वभाषया ॥ विद्वांसः क्षन्तुमर्हन्ति यद्यत्र दूषणं गिराम् ॥९॥

अग्निरुवाच ।

आयुर्वेदं प्रवक्ष्यामि सुश्रुताय यमब्रवीत् ॥
देवो धन्वन्तरिः सारं मृतसञ्जीवनीकरम् ॥ १ ॥

अर्थ—अग्निमहाराज वशिष्ठऋषिसे बोले कि—सारांशभूत और मृतकको जिलानेवाला ऐसा आयुर्वेद अर्थात् वैद्यकशास्त्र हम कहतेहैं. जिसको धन्वन्तरि महाराजने सुश्रुतके वास्ते वर्णन किया है ॥ १ ॥

सुश्रुत उवाच ॥ आयुर्वेदं मम ब्रूहि नराश्वेभरुगर्दनम् ॥ सिद्धयोगान् सिद्धमन्त्रान् मृतसञ्जीवनीकरान् ॥ २ ॥

अर्थ— सुश्रुत अग्निजीसे बोले कि— मनुष्य, अश्व, हस्ती, इनके रोगको नाश करदेनेवाला ऐसा वैद्यकशास्त्र हमारे अर्थ वर्णन करो. और मृतकोंके जिलानेवाले सिद्धयोग, सिद्धमंत्र जो हैं तिनको वर्णन करो ॥ २ ॥

धन्वन्तरिरुवाच ॥

रक्षन् बलं हि ज्वरितं लङ्घितं भोजयेद्भिषक् ॥
सविश्वं लाजमण्डन्तु तृड्ज्वरान्तं शृतं जलम् ॥३॥

अर्थ—धन्वन्तरि महाराज बोले कि—बलको रक्षा करते ज्वररोगीको लंघन कराके भोजन देवे. सोंठ, धानकी लाई इनका मंड बनाकर देवे, और जबतक तृषा व ज्वर नाशको न प्राप्त हो तबतक उष्ण जल देवै ॥ ३ ॥

मुस्तपर्पटकोशीरचन्दनोदीच्यनागरैः ॥
षडहे च व्यतिक्रान्ते तिक्तकं पाययेद्द्रवम् ॥ ४ ॥

अर्थ--छादिन बीते नागरमोथा, पित्तपापरा, खस, सपेद चंदन, चिरायता, सोंठ इनका तिक्तक निश्चय करके पान करावै ॥ ४ ॥

स्नेहयेत्त्यक्तदोषन्तु ततस्तं च विरेचयेत् ॥
जीर्णषष्टिकनीवाररक्तशालिप्रमोदकाः ॥ ५ ॥

अर्थ—और त्यक्तदोष पुरुषको स्नेहन करावै, पश्चात् विरेचन करावै और पुराने साठीके धान, फँसही, रक्त शाली इनके मोदक यानी लड्डू ॥ ५ ॥

तद्विधास्ते ज्वरेष्विष्टा यवानां विकृतिस्तथा ॥
मुद्गा मसूराश्चणकाः कुलत्थाश्च सकुष्ठकाः ॥ ६ ॥

अर्थ—इसतरहके ज्वरमें पथ्य हैं. और तिसप्रकार यवकी भी विकृति यानी लड्डू पथ्य हैं. मूंग, मसुरी, रहिला, खुरथी, ये सब कूट औषधके मिलानेसे पथ्य हैं ॥ ६ ॥

आढक्यो नारकाद्याश्च कर्कोटककठिल्लकौ ॥
पटोलं सफलं निम्बं पर्पटं दाडिमं ज्वरे ॥ ७ ॥

अर्थ—और अरहर, नालकादिक, खेकसा, करैला, परवर, फलसहित निम्बपत्र, पित्तपापरा, अनार ये सब औषधें ज्वरमें पथ्य हैं ॥ ७ ॥

अधोगे वमनं शस्तमूर्ध्वगे च विरेचनम् ॥
रक्तपित्ते तथा पानं षडङ्गं शुण्ठिवर्जितम् ॥ ८ ॥

अर्थ— तथा नाम तिसप्रकार अधोग रक्तपित्तमें वमन अच्छा है और ऊर्ध्वग रक्तपित्तमें विरेचन अछा है तथा शुंठीके विना पूर्वोक्त मुस्तादि षडङ्गका पेया बनाकर देवे ॥८॥

सक्तुगोधूमलाजाश्च यवशालिमसूरकाः ॥
सकुष्ठचणका मुद्गा भक्ष्या गोधूमका हिताः ॥ ९ ॥

अर्थ—और रक्तपित्तमें सत्तू, गेहूं, धानकी लाई, यव, धान, मसुरी ये सब अन्न पथ्य हैं. और कूट, रहिला इनकरके सहित मूंग, गेहूं अतीसारमें ये भक्ष्य हित हैं ॥ ९ ॥

साधिता घृतदुग्धाभ्यां क्षौद्रं वृषरसो मधु ॥
अतीसारे पुराणानां शालीनां भक्षणं हितम् ॥१०॥

अर्थ— कैसे मूंग इत्यादिक अन्न हों कि घृतदुग्धकरके साधित हों और ममाखी वा रूसके पत्तोंका रस, जेठीमद इनको मिश्रित करलेवे और अतीसारमें पुराने चावलोंका भात हित है ॥ १० ॥

अनभिष्यन्दि यच्चान्नं लोध्रवल्कलसंयुतम् ॥
मारुतं वर्जयेद्यत्नः कार्य्यो गुल्मेषु सर्व्वथा ॥ ११ ॥

अर्थ—और रक्तादिकोंको न बढ़ावै ऐसा अन्न, लोधके वृक्षके बोकलाकरके सहित अतीसारमें हित है. और गुल्मरोगमें वायुको बचावै और सर्वप्रकारसे यत्न करै ॥ ११ ॥

वाटयक्षीरेण चाश्नीयाद्वास्तूकं घृतसाधितम् ॥
गोधूमशालयस्तिक्ता हिता जठरिणामथ ॥ १२ ॥

अर्थ—और गुल्ममें घृतसाधित बथुईका शाक बरगदका दूध मिलाकर खावे और गेहूं, धान, तिक्तान्न, उदररोगवालेको हित हैं ॥ १२ ॥

गोधूमशालयो मुद्गा ब्रह्माक्षः खदिरोऽभया ॥
पञ्चाकोलं जाङ्गलाश्च निम्बधात्र्यः पटोलकाः १३।

अर्थ— गेहूं, धान, मूंग, खदिर, हड़ बड़ी, पंचकोल अर्थात् पिपरी छोटी, पिपरामूरि, चाब, चीत, सोंठ, जंगली जीवोंका मांस, निम्ब, अँवरा, पड़वल, ॥ १३ ॥

मातुलुङ्गरसाजातिशुष्कमूलकसैन्धवाः ॥
कुष्ठिनां च तथा शस्तं पानार्थे खदिरोदकम्॥१४॥

अर्थ— बिजौरा निंबूका रस, चमेलीके फूल,सूखी मूरीकी जर, सेंधव ये सब उदररोगवालेको हित हैं. तिसीप्रकार कुष्ठरोगवालेको पीनेके वास्ते खदिरोदक हित है ॥ १४ ॥

मसूरमुद्गौ पेयार्थे भोज्या जीर्णाश्च शालयः ॥
निम्बपर्प्पटकैः शाकैर्जाङ्गलानां तथा रसः ॥१५॥

अर्थ— और मसुरी, मूंग इनकी पेया, भोजनके वास्ते पुराने चावल और निम्ब, पित्तपापरा, शाक तथा जंगली जीवोंके मासका रस ये सब हित हैं ॥ १५ ॥

विडङ्गा मरिचं मुस्तं कुष्ठं लोध्रं सुवर्चिका ॥
मनश्शिला च वालेयः कुष्ठहा मूत्रपेषितः ॥ १६ ॥

अर्थ— वायबिडंग, काली मिरिच, नागरमोथा, कूट, पठानीलोध, जवाखार, मैनशिल, भारंगी इनका समभाग-चूर्ण बनाकर गोमूत्रमें मिलाकर लगावै तौ कुष्ठ दूर हो॥१६॥

अपूपकुष्ठकुल्माषयवाद्या मेहिनां हिताः ॥
यवान्नविकृतिर्मुद्गाः कुलत्था जीर्णशालयः ॥ १७॥

अर्थ— पुवा, कुट, खुरथी, यव इत्यादिक अन्न मेहरोगवालेको हित हैं. यवकी विकृति, मूंग, खुरथी, पुराने चावल, ॥ १७ ॥

तिक्तरूक्षाणि शाकानि तिक्तानि हरितानि च ॥
तैलानि तिलशिग्रूकबिभीतकेङ्गुदानि च ॥१८॥

अर्थ— तिक्त और शूखा शाक, तिक्त और हरित शाक, तिल, सहिंजन, बहेड़ा, इँगुवा, इत्यादिकोंका तैल॥१८॥

मुद्गाः सयवगोधूमा धान्यं वर्षस्थितं च यत् ॥ जा-
ङ्गलस्य रसः शस्तो भोजने राजयक्ष्मिणाम् ॥१९॥

अर्थ— यव, गेहूं—करके सहित मूंग, वर्षस्थित अर्थात् सालभरका पुराना अन्न, जंगली जीवोंके मांसका रस ये सब राजयक्ष्मारोगवाले पुरुषको भोजनमें हित हैं ॥ १९ ॥

कौलत्थमौद्गके रास्नाशुष्कमूलकजाङ्गलैः ॥
यूपैर्वा विष्किरैः सिद्धैर्दधिदाडिमसाधितैः ॥२०॥

अर्थ— खुरथी, मूंग, रासनि, शूखी मूरी, जंगली जीवोंका मांस, पुवा, पक्षियोंका मांस, दही व अनारकरके साधित ॥ २० ॥

मातुलुङ्गरसक्षौद्रद्राक्षाव्योषादिसंस्कृतैः ॥
यवगोधूमशाल्यन्नैर्भोजयेच्छ्वासकासिनम् ॥ २१ ॥

अर्थ— बिजारो निंबुवाका रस, ममाखी, दाख, व्योष अर्थात् सोंठ, पीपल छोटी, मिरिच काली इत्यादि पदार्थों-करके साधित जो हैं यव, गेहूं, धान, ये सब पूर्वोक्त पदार्थ श्वासकासरोगवाले पुरुषको हित हैं ॥ २१ ॥

दशमूलबलारास्नाकुलत्थैरुपसाधिताः ॥
पेयाः यूषरसाः क्वाथाः श्वासहिक्कानिवारणाः ।२२॥

अर्थ— दशमूल, बरियारी, रासनि, खुरथी, इनकरके साधित जो हैं पेया और यूषरस, काढ़ा सो श्वास व हिक्काको नाश करदेनेवाले हैं ॥ २२ ॥

शुष्कमूलककौलत्थमूलजाङ्गलजै रसैः ॥
यवगोधूशाल्यन्नं जीर्णे सोशीरमाचरेत् ॥ २३ ॥

अर्थ— सूखी मूरी, खुरथीकी जर, जंगली जीवोंके मांसका रस, यव, गेहूं, धान, खस, जीर्ण ज्वरवाले पुरुषको ये पदार्थ हित हैं ॥ २३ ॥

शोथवान् सगुडां पथ्यां खादेद्वा गुडनागरम् ॥
तक्रं च चित्रकं चोभौ ग्रहणीरोगनाशनौ ॥ २४ ॥

अर्थ— शोथवान् पुरुष गुड, हड़ बड़ी, या गुड, शुंठी खावै. तक्र, चीत ये दो ग्रहणीरोगनाशक हैं ॥ २४ ॥

पुराणयवगोधूमशालयो जाङ्गलो रसः ॥
मुद्गामलकखर्जूरमृद्वीकाबदराणि च ॥ २५ ॥

अर्थ— पुराने यव, गेहूं, धान, जंगली जीवोंके मांसका रस, मूंग, आंवला, छोहारा, दाख, बेर, ॥ २५ ॥

मधु सर्पिः पयः शक्रं निम्बपर्पटकौ वृषम् ॥
तक्रारिष्टाश्च शस्यन्ते सततं वातरोगिणाम् ॥२६॥

अर्थ—शहत, घृत, दुग्ध, इन्द्रयव, निम्ब, पित्तपापरा, रूस, तक्रारिष्ट, ये सब पूर्वोक्त पदार्थ वातरोगीको निरन्तर उत्तम हैं ॥ २६ ॥

हृद्रोगिणो विरेच्यास्तु पिप्पल्यो हिक्किनां हिताः ॥
तक्रारनालसिन्धूनि भुक्तानि शिशिराम्भसा २७॥

अर्थ— हृद्रारोगीको विरेचन करावे, हिक्कावालेको पिपरी हित हैं, तक्र, माठा (छाछ), कांजी, सेंधव इन सब दवाइयोंमें ठंढा जल मिलाकर पान करै ॥ २७ ॥

मुक्ताः सौवर्चलाजाजी मद्यं शस्तं मदात्यये ॥
सक्षौद्रपयसा लाक्षां पिबेच्च क्षतवान्नरः ॥ २८ ॥

अर्थ— मोतीकी भस्म, काला निमक, जीरा, मद्य ये सब मदात्ययरोगमें उत्तम हैं. और व्रणी पुरुष सहत, गौका दुग्ध मिलाकर लाहको पीवै ॥ २८ ॥

क्षयं मांसरसाहारो वह्निसंरक्षणाज्जयेत् ॥
शालयो भोजने रक्ता नीवारकलमादयः ॥ २९ ॥

अर्थ— मांसरस खानेवाला पुरुष अग्निके संरक्षणसे क्षयरोगको जीतलेताहै. भोजनमें रक्तशाली, फसही, लायन, हित हैं ॥ २९ ॥

यवान्नविकृतिर्मांसं शाकं सौवर्चलं शटी ॥
पथ्या तथैवार्शसां यत् मण्डं तक्रं च वारिणा॥३०॥

अर्थ— यवान्नकी विकृति, मांस,शाक, सोचर, कचूर, बड़ी हड़, मण्ड, जलयुक्त तक्र ये सब पदार्थ अर्शरोगवालोंको हित हैं ॥ ३० ॥

मुस्ताभ्यासस्तथा लेपश्चित्रकेण हरिद्रया ॥
यवान्नविकृतिः शालिर्वास्तूकं ससुवर्चलम्॥३१॥

अर्थ— और नागरमोथाका अभ्यास करै. चित्रक व हरिद्राका गुदामें लेप करै; यवान्नकी विकृति, शाली, बथुई सोचर, ॥ ३१ ॥

त्रपुसैर्वारुगोधूमाः क्षीरेक्षुघृतसंयुताः ॥
मूत्रकृच्छ्रे च शस्ताः स्युः पाने मण्डसुरादयः॥३२॥

अर्थ— खीरा, ककरी, गेहूं ये सब दुग्ध, इक्षुविकार, घृत इनकरके संयुक्त मूत्रकृच्छ्रमें उत्तम हैं और पान करनेमें मण्ड और सुरादिक उत्तम हैं ॥ ३२ ॥

लाजाः सक्तुस्तथा क्षौद्रं शूल्यं मांसं परूषकम् ॥
वार्ताकुलावशिखिनश्छर्दिघ्नाः पानकानि च ३३॥

अर्थ— लाई, सत्तू, ममाखी, शूल्यमास यानी तेकुवामें छेदकर पकाया हुवा मांस, फलसा, वार्ताक (बटेर), मुरैला और सम्पूर्ण पेया ये पदार्थ छर्दिनाशक हैं ॥ ३३ ॥

शाल्यन्नं तोयपयसी केवलोष्णे शृतेऽपि वा ॥
तृष्णाघ्ने मुस्तगुडयोर्गुटिका वा मुखे धृता ॥ ३४ ॥

अर्थ— ओदन, जल, दुग्ध, ये केवल उष्ण या शृत हों तौ तृष्णाको नाश करतेहैं. अथवा नागरमोथा, गुड़ इन दोनोंकी गुटिका बनाकर मुखमें धारण करै ॥ ३४ ॥

यवान्नविकृतिः पूपं शुष्कमूलकजं तथा ॥
शाकं पटोलवेत्राग्रमूरुस्तम्भविनाशनम् ॥ ३५ ॥

अर्थ— यवान्नविकृति, पूप, शूखी मूरीका शाक, पटोल और बेंतके पत्तोंका शाक ये ऊरुस्तंभनाशक हैं ॥ ३५ ॥

मुद्गाढकमसूराणां सतिलैर्जाङ्गलै रसैः ॥
ससैन्धवघृतद्राक्षाशुण्ठ्यामलककोलजैः ॥ ३६ ॥

अर्थ— मूंग, अरहर, मसुरी, तिल, जंगली जीवोंके मांसका रस, सेंधव, घृत, दाख, शुंठी, आंवला, बैरकी गूदी॥३६॥

यूषैः पुराणगोधूमयवशाल्यन्नमभ्यसेत् ॥
विसर्पी ससिताक्षौद्रमृद्वीकादाडिमोदकम् ॥ ३७ ॥

अर्थ-- इन पदार्थोंका यूष और पुराने गेहूं, यव शाली इन पदार्थोंको विसर्पी सेवन करै. सक्कर, शहत, दाख, अनारका सर्बत, ॥ ३७ ॥

रक्तषष्टिकगोधूमयवमुद्गादिकं लघु ॥
काकमाची च वेत्राग्रं वास्तुकं च सुवर्चला ॥३८॥

अर्थ— रक्त साठीके चावल, गेहूं, यव, मूंग ये लघु पदार्थ और काकादनी, बेंतके पत्ते, बथुई, सोचर, ॥ ३८ ॥

वातशोणितनाशाय तोयं शस्तं सितं मधु ॥
नासारोगेषु च हितं घृतं दूर्वाप्रसाधितम् ॥ ३९ ॥

अर्थ-- ये पूर्वोक्त पदार्थ वातनाशक हैं. जल स्वच्छ सहत ये भी वातरक्तनाशक हैं. दूर्वाप्रसाधित घृत नासारोगमें हित हैं ॥ ३९ ॥

भृङ्गराजरसे सिद्धं तैलं धात्रीरसेऽपि वा ॥
नस्यं सर्वामयेष्विष्टं मूर्द्धजन्तूद्भवेषु च ॥ ४० ॥

अर्थ—भँगिराके रसमें बनाया हुवा तैल या धात्रीरसमें बनाया हुवा तैल संपूर्ण रोगोंमें नस्य करनेयोग्य है. मस्तकमें उत्पन्न हुये यूका लिक्षा यानी जुंवा लीख आदि जीवोंको नाश कर देता है ॥ ४० ॥

शीततोयान्नपानं च तिलानां विप्र भक्षणम् ॥
द्विजदार्ढ्यकरं प्रोक्तं तथा तुष्टिकरं परम् ॥ ४१ ॥

अर्थ—शीतजल, अन्न, तिल इनका पान और भक्षण करे तौ दांतोंकी पुष्टिका कारक और परमपुष्टिकारक है ४१

गण्डूषं तिलतैलेन द्विजदार्ढ्यकरं परम् ॥
विडङ्गचूर्णं गोमूत्रं सर्वत्र कृमिनाशने ॥ ४२ ॥

अर्थ—तिलके तेलका कुल्ला करै तौ दांत परम पुष्ट होजाते हैं. बायबिडंगका चूर्ण जो मूत्रमें मिलाकर लगावे- तौ कृमिनाशक है ॥ ४२ ॥

धात्रीफलान्यथाज्यं च शिरोलेपनमुत्तमम् ॥
शिरोरोगविनाशाय स्निग्धमुष्णं च भोजनम्॥४३॥

अर्थ—आंवला, घृत, शिरके रोगोंके नाश करनेके वास्ते शिरका उत्तम लेप है. भोजनके वास्ते स्निग्ध और उष्ण भोजन करै ॥ ४३ ॥

तैलं वा बस्तमूत्रं च कर्णपूरणमुत्तमम् ॥
कर्णशूलविनाशाय सर्व्वशुक्तानि वा द्विज ॥ ४४॥

अर्थ—तैल अथवा बकड़ेका मूत्र कर्णमें पूरण करै तौ कर्णशूलका विनाश होताहै; अथवा सब तेरेके शिरका छांड़ै ४४

गिरिमृच्चन्दनं लाक्षा मालतीकलिका तथा ॥
संयोज्य या कृता वर्तिः क्षतशुक्रहरी तु सा ॥४५॥

अर्थ—गेरू, चंदन सपेद, लाह, चमेलीकी कली, इन पदार्थोंको संयुक्त करके जो बत्ती बनाई गई सो क्षतशुक्र यानी अक्षिविशेषरोगको नाश करदेती है ॥ ४५ ॥

व्योषं त्रिफलया युक्तं तुत्थकं च तथा जलम् ॥
सर्व्वाक्षिरोगशमनं तथा चैव रसाञ्जनम् ॥ ४६ ॥

अर्थ—सोंठ, पीपर, मिरिच, आंवला, हड़, बहेरा, तूतिया, सुगंधवाला इनका चूर्ण तिसीप्रकार रसवंत, सम्पूर्ण नेत्ररोगोंको शांत करदेनेवाला है ॥ ४६ ॥

आज्यभ्रष्टं शिलापिष्टं लोध्रकाञ्जिकसैन्धवैः ॥
आश्च्योतनविधानेन सर्वनेत्रामये हितम् ॥ ४७ ॥

अर्थ—इसी पूर्वोक्त चूर्णको घीमें भूनकर पठानीलोध, कांजी, सेंधव इनको मिलाकर खरल करै पश्चात् आश्च्योतन-विधिसों सम्पूर्ण नेत्ररोगोंमें हित है ॥ ४७ ॥

गिरिमृच्चन्दनैर्लेपो बहिर्नेत्रस्य शस्यते ॥
नेत्रामयविघातार्थं त्रिफलां शीलयेत्सदा ॥४८॥
रात्रौ तु मधुसर्पिभ्यां दीर्घमायुर्जिजीविषुः ॥
शतावरीरसे सिद्धौ वृष्यौ क्षीरघृतौ स्मृतौ ॥ ४९ ॥

अर्थ—गेरू, सपेद चंदन, इनका लेप नेत्रके बाहर लगाना हित है. और सम्पूर्ण नेत्ररोगोंके नाश करनेके वास्ते शहत, घृत मिलाकर त्रिफलाको सदा रात्रिमें सेवन करै. और दीर्घायु होनेकी इच्छावाले पुरुषको छतावरके रसमें सिद्ध जो हैं दुग्ध घृत सो वृष्य हैं ॥ ४८ ॥ ४९ ॥

कलम्बिकानि माषाश्च वृष्यौ क्षीरघृतौ तथा ॥
आयुष्या त्रिफला ज्ञेया पूर्ववन्मधुकान्विता ॥५०॥

अर्थ—करेंबुआ शाक, माष तथा दुग्ध, घृत ये सम्पूर्ण वृष्य हैं. और पूर्ववत् जेठीमधुकरके युक्त त्रिफला आयुष्य है ॥ ५० ॥

मधुकादिरसोपेता वलीपलितनाशिनी ॥
वचासिद्धं घृतं विप्र भूतदोषविनाशनम् ॥ ५१ ॥

अर्थ—मधुकादिरसोंकरके युक्त त्रिफला वलीपलित-नाशिनी है और वचाकरके सिद्ध घृत भूतदोषको नाश करदेता है ॥ ५१ ॥

कव्यं बुद्धिप्रदं चैव तथा सर्व्वार्थसाधनम् ॥
बलाकल्ककषायेण सिद्धमभ्यञ्जने हितम् ॥५२॥

अर्थ--कैसा घृत है कि काव्यमें शक्तिकारक है, बुद्धिके देनेवाला है, सम्पूर्ण अर्थोंके साधन करनेवाला है. और बरियारीकी जरके कल्क अथवा कषायकरके सिद्ध तैल अभ्यञ्जनमें अर्थात् देहके लगानेमें हित है ॥ ५२ ॥

रास्नासहचरैर्वापि तैलं वातविकारिणाम् ॥
अनभिष्यन्दि यच्चान्नं तद्व्रणेषु प्रशस्यते ॥ ५३ ॥

अर्थ--रासनि, कंसरैयाकी छालीकरके सिद्ध तैल वातविकारियोंके वास्ते हित है. रुक्ष अन्न व्रणरोगमें उत्तम है ५३

सक्तुपिण्डी तथैवाम्ला पाचनाय प्रशस्यते ॥
पक्वस्य च तथा भेदे निम्बचूर्णं च रोपणे ॥५४॥

अर्थ--सतुवोंकी पिंडी, अम्ल यानी अम्लपदार्थ अर्थात् तक्रमें मिलाकर लगावै तौ व्रणके पकानेके वास्ते उत्तम है. और जब पक्वव्रण फूटगया तौ उस व्रणके पूरनेके वास्ते निंबके पत्रोंका चूर्ण लगाना हित है ॥ ५४ ॥

तथा सूच्युपचारश्च बलिकर्म विशेषतः ॥
सूचिका च तथा रक्षा प्राणिनां तु सदा हिता॥५५॥

अर्थ-- तिसीप्रकार विशेषकरके बलिकर्म करै पश्चात् शूच्युपचार यानी फोड़ेमें नस्तर लगावै फिर सूचिकारक्षा यानी फोड़ेमें जो नस्तर लगाया गया है उसकी रक्षा करना जीवोंके वास्ते सदा हित है ॥ ५५ ॥

भक्षणं निम्बपत्राणां सर्पदष्टस्य भेषजम् ॥
तालनिम्बदलं केश्यं जीर्णं तैलं यवाघृतम् ॥ ५६ ॥

अर्थ— जिसको सर्प्प काटै उसको निंबके पत्रोंका भक्षण करना हित है. तालवृक्षके पत्ते, निंबके पत्ते इनका चूर्ण और पुराना तैल मिलाकर लगावै तौ केश जामतेहैं. और यव घृत मिलाकर धूप करै तौ जिसको बिच्छूने काटा हो वह अच्छा होजाता है ॥ ५६ ॥

धूपो वृश्चिकदष्टस्य शिखिपत्रघृतेन वा ॥
अर्कक्षीरेण सम्पिष्टं लेपाद्बीजं पलाशजम् ॥ ५७ ॥
वृश्चिकार्तस्य कृष्णा वा शिवा च फलसंयुता ॥

अर्थ— और जिसको बिच्छूने काटा हो उसके मोरका पंख, घृत मिलाकर धूप करै तौ अच्छा होजाता है. पलाशके बीज मदारेके दूधमे बाँटकर जिस जगेमें बिच्छूने मारा हो उसी जगे लेप करै तौ अच्छा होजाता है॥५७॥ अथवा वृश्चिकार्त्त यानी जिसको बीछीने मारा हो उसको पिपरी अथवा फलयुक्त बड़ी हड़ हित है ॥

अर्कक्षीरं तिलं तैलं पललं च गुडं समम् ॥ ५८ ॥
पानाज्जयति दुर्वारं श्वविषं शीघ्रमेव तु ॥

अर्थ— मदारेका दूध, तिल, तैल,मांस, गुड ये संपूर्ण दूधमें बाँटकर ॥ ५८ ॥ पान करै तौ जल्दी कुत्तेका भयंकर विष शांत हो जाता है ॥

पीत्त्वा मूलं त्रिवृत्तुल्यं तण्डुलीयस्य सर्पिषा ॥५९॥
सर्प्पकीटविषाण्याशु जयत्यतिबलान्यपि ॥

अर्थ— तिधारु, चमराईकी जर दोनों बराबर बाँटकर घीमे मिलाकर पीवे तौ ॥५९॥ सर्प, विच्छू इत्यादि विषोंको यह औषध नाश करदेती है ॥

चन्दनं पद्मकं कुष्ठं लताम्बूशीरपाटलाः ॥ ६० ॥
निर्गुण्डी शारिवाशेलुर्लूताविषहरोऽगदाः ॥

अर्थ—सपेद चंदन, पद्माख, कूट, गोंदकी जर, सुगंधवाला, खस, पाड़री,॥६०॥ सम्हालू,कारीसाँव,लसोहराकी छाली यह औषध पानीमें बाँटकर पीवे तौ मकरीके विषको नाश करदेती है ॥

शिरोविरेचनं शस्तं गुडनागरकं द्विज ॥ ६१ ॥

अर्थ—हे द्विज ! गुड, शुंठी ये दोनों शिरके विरेचनमें उत्तम हैं ॥ ६१ ॥

स्नेहपाने तथा बस्तौ तैलं घृतमनुत्तमम् ॥
स्वेदनीयः परो वह्निः शीताम्भः स्तम्भनं परम्॥६२॥

अर्थ—स्नेहपानमें तिसीप्रकार बस्तिमें तैल और घृत ये दो उत्तम चाहिये. परवह्नि यानी अधिक अग्नि जिसके हो उसको स्वेदन कराना चाहिये और शीतजल उत्तम स्तंभन है॥६२॥

त्रिवृद्विरेचने श्रेष्ठा वमने मदनं तथा ॥
वस्तिर्विरेको वमनं तैलं सर्पिस्तथा मधु ॥
वातपित्तबलासानां क्रमेण परमौषधम् ॥ ६३ ॥

अर्थ— रेचनमें तिधारु उत्तम है, और वमनमें मैनफल उत्तम है. वस्ति, तैल ये दोनों वातकी परम औषध हैं, विरेचन घृत ये दोनों पित्तकी परम औषध हैं. वमन, ममाखी ये दोनों कफकी परम औषध हैं ॥ ६३ ॥

इत्याग्नेये महापुराणे सिद्धौषधानि नामैकोनाशीत्यधिकद्विशततमोऽध्यायः ॥ २७९ ॥

अथाशीत्त्यधिकद्विशततमाध्याये सर्वरोगहराण्यौषधानि लिख्यन्ते ॥

धन्वन्तरिरुवाच ॥

शारीरमानसागन्तुसहजा व्याधयो मताः ॥
शारीरा ज्वरकुष्ठाद्याः क्रोधाद्या मानसा मताः॥१॥

अर्थ—धन्वंतरिजी महाराज बोले कि–शारीर,मानस, आगंतुक, सहज ये चार प्रकारको व्याधी होती हैं. ज्वर, कुष्ठ इत्त्यादिक शारीर व्याधी हैं, क्रोध इत्यादिक मानस व्याधी हैं ॥ १ ॥

आगन्तवो विघातोत्थाः सहजाः क्षुज्जरादयः ॥
शारीरागन्तुनाशाय सूर्य्यवारे घृतं गुडम् ॥ २ ॥
लवणं सहिरण्यं च विप्रायापूपमर्प्पयेत् ॥
चन्द्रे चाभ्यङ्गदो विप्रे सर्व्वरोगैः प्रमुच्यते ॥ ३ ॥

अर्थ—कोई विघातसे उत्पन्न हुई आगंतुक व्याधी हैं. क्षुधा, बुढ़ाई ये दोनों सहज व्याधी हैं. शारीर, आगंतुक इन दो व्याधियोंके नाश करनेके वास्ते रविवारके रोज घृत, गुड, लवण, सोना, अपूप ब्राह्मणको दान करै. सोमवारके रोज ब्राह्मणको उबटन दान करै तौ सम्पूर्ण रोगोंसे छूट जाता है ॥ २ ॥ ३ ॥

तैलं शनैश्चरे दद्यादाश्विने गोरसान्नदः ॥
घृतेन पयसा लिङ्गं संस्नाप्य स्याद्रुगुज्झितः ॥ ४॥

अर्थ—शनैश्चरके रोज तैलदान करै, अथवा कुवारमें गोरस यानी तक्र और अन्न दान करै, अथवा घी दूध क-

रके शिवलिंगकी पूजा करै तौ सम्पूर्ण रोगोंसे मुक्त हो जाता है ॥ ४ ॥

गायत्र्या हावयेद्वह्नौ दूर्वां त्रिमधुराप्लुताम् ॥
यस्मिन्भे व्याधिमाप्नोति तस्मिन्स्नानं बलिः शुभे ५

अर्थ— घी, सक्कर, सहत, दूध इनको मिलाकर गायत्रीसे अग्निमें हवन करै. जिस नक्षत्रमें रोग हो उसी नक्षत्रमें स्नान बलिकर्म करै ॥ ५ ॥

मानसानां रुजादीनां विष्णोः स्तोत्रं हरं भवेत् ॥
वातपित्तकफा दोषा धातवश्च तथा शृणु ॥ ६ ॥

अर्थ— मनसे उत्पन्न हुये रोगादिकोंको विष्णुका स्तोत्र हरलेता है. वात पित्त कफ ये दोष हैं, तथा सम्पूर्ण धातुभी दोष हैं, ये सम्पूर्ण सुनिये ॥ ६ ॥

भुक्तं पक्वाशयादन्नं द्विधा याति च सुश्रुत ॥
अंशेनैकेन किट्टत्त्वं रसतां चापरेण ह ॥ ७ ॥

अर्थ— सुश्रुतसे धन्वंतरि महाराज बोले- हे सुश्रुत ! भोजन किया गया अन्न पक्वाशयसे दो प्रकारसे जाता है;एक अंशसे किट्टत्वको प्राप्त होता है द्वितीय अंशसे रसताको प्राप्त होजाता है ॥ ७ ॥

किट्टभागो मलस्तत्र विण्मूत्रस्वेददूषिकाः ॥
नासामलं कर्णमलं तथा देहमलं च यत् ॥ ८ ॥

अर्थ— तहांके विषे जो किट्टका भाग है सो मल है सो कैसा मल है कि विट् यानी विष्ठा, मूत्र, स्वेद यानी पसीना, दूषिका यानी नेत्रमल, नासिकाका मल, कर्णमल, तिसीप्रकार देहमल होता है ॥ ८ ॥

रसभागाद्रसस्तत्र समाच्छोणिततां व्रजेत् ॥
मांसं रक्तात्ततो मेदो मेदसोऽस्थ्नश्च सम्भवः ॥९॥

अर्थ— तहांके विषे जो सम रसभाग है तिसमें शोणित यानी रक्त होजाता है. रक्तसे मांस मांससे मेदा मेदासे हाड़ होते हैं ॥ ९ ॥

अस्थ्नो मज्जा ततः शुक्रं शुक्राद्रागस्तथौजसः ॥
देशमार्तिं बलं शक्तिं कालं प्रकृतिमेव च ॥ १० ॥
ज्ञात्त्वा चिकित्सितं कुर्य्याद्भेषजस्य तथा बलम् ॥

अर्थ— अस्थिसे मज्जा, मज्जासे शुक्र, शूक्रसे ओज यानी इन्द्रियोंका बल,बलसे राग होता है. और देश, पीडा, बल, सामर्थ्य, काल, स्वभाव ॥ १० ॥ तथा औषधका बल जानकर वैद्य औषध करै ॥

तिथिं रिक्तां त्यजेद्भौमं मन्दं भं दारुणोग्रकम्॥११॥
हरिगोद्विजचन्द्रार्कसुरादीन् प्रतिपूज्य च ॥
शृणु मन्त्रमिमं विद्वन्भेषजारम्भमाचरेत् ॥ १२ ॥

अर्थ— रिक्ता तिथि यानी चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी, मंगल, शनैश्चर, दारुणसंज्ञक, उग्रसंज्ञक, नक्षत्र यानी पूर्वा फाल्गुनी, पूर्व्वाषाढ़ा, पूर्व्वाभाद्रपदा, भरणी, मघा, मूल, ज्येष्ठा, आश्लेषा, आर्द्रा इनको छोड़; विष्णु, गौ, ब्राह्मण, चंद्रमा, सूर्य्य तथा अन्य देवतावोंकीभी पूजा करके औषध-का आरम्भ करै. हे विद्वन् ! यानी हे सुश्रुत ! इस मंत्रको सुनो ॥ ११ ॥ १२ ॥

ब्रह्मदक्षाश्विरुद्रेन्द्रभूचन्द्रार्कानिलानलाः ॥
ऋषयश्चौषधिग्रामा भूतसङ्घाश्च पान्तु ते ॥ १३ ॥

अर्थ— ब्रह्मा, दक्ष, अश्विनीकुमार, रुद्र,इन्द्र, पृथ्वी, चंद्रमा, सूर्य्य, वायु, अग्नि, ऋषि, औषधीसमूह, भूतसमूह ये सब तुम्हारी रक्षा करैं ॥ १३ ॥

रसायनमिवर्षीणां देवानाममृतं यथा ॥
सुधेवोत्तमनागानां भैषज्यमिदस्तुते ॥ १४ ॥

अर्थ— जैसे ऋषिनको रसायन, देवतावोंको अमृत, उत्तम सर्प्पोंको सुधा है; उसी तरह आपको यह औषध गुणदायक होय ॥ १४ ॥

वातश्लेष्मातको देशो बहुवृक्षो बहूदकः ॥
अनूप इति विख्यातो जाङ्गलस्तद्विवर्जितः ॥१५॥

अर्थ— वातश्लेष्मा जिसमें बहुत हों, बहुत वृक्ष हों, बहुत जल हो ऐसे देशको अनूप कहते हैं. अनूपदेशसे विवर्जित जांगल देश है ॥ १५ ॥

किंचिद्वृक्षादको देशस्तथा साधारणः स्मृतः ॥
जाङ्गलः पित्तबहुलो मध्यः साधारणः स्मृतः॥१६॥

अर्थ— थोड़े वृक्ष और जल जिसमें हों उसको साधारण कहते हैं. जिसमें पित्त बहुत हो उसको जांगल देश कहते हैं; और साधारण देश मध्य होता है ॥ १६ ॥

रूक्षः शीतश्चलो वायुः पित्तमुष्णं सरं कटु ॥
स्थिराम्लस्निग्धमधुरं बलासं च प्रचक्षते ॥ १७ ॥

अर्थ— रूक्ष शीत चलायमान ऐसे वायु होते हैं, उष्ण रेचन कटु ऐसा पित्त होता है, स्थिर अम्ल स्निग्ध मधुर ऐसा कफ होता है ॥ १७ ॥

वृद्धिः समानैरेतेषां विपरीतैर्विपर्ययः ॥
रसाः स्वाद्वम्ललवणाः श्लेष्मला वायुनाशनाः १८।

अर्थ—वात पित्त कफ ये जब बराबर हों तब इनकी वृद्धि होती है, जब न्यूनाधिकभये तब इनकी क्षीणता होती है. स्वादु अम्ल लवण श्लेष्माकारक ऐसे रस वायुनाशक होते हैं ॥ १८ ॥

कटुतिक्तकषायाश्च वातलाः श्लेष्मनाशनाः ॥
कट्वम्ललवणा ज्ञेया-स्तथापित्तविवर्द्धनाः ॥ १९ ॥

अर्थ— कटु, तिक्त, कषाय वातके बढ़ानेवाले ऐसे रस श्लेष्मानाशक हैं. कटु, अम्ल, लवण ऐसे रस पित्तके बढ़ानेवाले हैं ॥ १९ ॥

तिक्तस्वादुकषायाश्च तथा पित्तविनाशनाः ॥
रसस्यैतद्गुणं नास्ति विपाकस्यैतदिष्यते ॥ २० ॥

अर्थ— तिक्त, स्वादु, कषाय ऐसे रस पित्तनाशक हैं. यह रसका गुण नहीं है किंतु विपाकका गुण है ॥ २० ॥

वीर्य्योष्णाः कफवातघ्नाः शीताः पित्तविनाशनाः।
प्रभावतस्तथा कर्म ते कुर्वन्ति च सुश्रुत ॥ २१ ॥

अर्थ— हे सुश्रुत! वीर्यमें उष्ण हों ऐसे रस कफवातनाशक हैं, जे शीत हैं ऐसे रस पित्तनाशक हैं, प्रभावसे वैसा कर्म करते हैं ॥ २१ ॥

शिशिरे च वसन्ते च निदाघे च तथा क्रमात् ॥
चयप्रकोपप्रशमाः कफस्य तु प्रकीर्तिताः ॥ २२ ॥

अर्थ—शिशिर यानी माघ फाल्गुनमें क्रमसे कफ एकत्र स्थित रहता है, वसंत यानी चैत्रवैशाखमें कफ कोप करता है. निदाघमें यानी ज्येष्ठ आषाढ़में, कफ शांत रहता है ॥ २२ ॥

निदाघवर्षाः रात्रौ च तथा शरदि सुश्रुत ॥
चयप्रकोपप्रशमाः पवनस्य प्रकीर्तिताः ॥ २३ ॥

अर्थ—हे सुश्रुत! निदाघमें यानी ज्येष्ठ आषाढ़में वायु एकत्र रहता है, वर्षारात्रिमें यानी कुवार कार्तिकमें वायु शांत रहता है ॥ २३ ॥

मेघकाले च शरदि हेमन्ते च यथाक्रमात् ॥
चयप्रकोपप्रशमास्तथा पित्तस्य कीर्तिताः ॥ २४ ॥

अर्थ—मेघकालमें यानी श्रावण भाद्रपदमें पित्त एकत्र रहता है, शरदमें यानी कुवार कार्तिकमें पित्त कोप करता है.हेमंतमें यानी अगहन पौषमें पित्त शांत रहताहै॥२४॥

वर्षादयो विसर्गास्तु हेमन्तान्तास्तथा त्रयः ॥
शिशिराद्यास्तथा दानं ग्रीष्मान्ता ऋतवस्त्रयः ॥२५॥

अर्थ—वर्षादिक हेमन्तान्त तीन ऋतु यानी श्रावण, भादौं, कुवार, कार्तिक, अगहन, पौष, ये विसर्गकाल हैं. तिसीप्रकार शिशिरादिक ग्रीष्मांत तीन ऋतु यानी माघ, फाल्गुन, चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़ ये आदानकाल हैं ॥ २५ ॥

सौम्यो विसर्गस्त्वादानमाग्नेयं परिकीर्तितम् ॥
वर्षादींस्त्रीनृतून्सोमश्चरन्पर्य्यायशो रसान् ॥२६॥

जनयत्यम्ललवणमधुरांस्त्रीन्यथाक्रमम् ॥

अर्थ—विसर्गकाल सौम्य है, अर्थात् चंद्रमाका है. आदानकाल आग्नेय है. अर्थात् अग्निका है. वर्षादिक जो तीन ऋतु तिनमें चंद्रमा प्राप्त होता हुआ क्रमसे अम्ल, लवण, मधुर, इन तीन रसोंको उत्पन्न करताहै. अर्थात् वर्षामें अम्ल, शरद्में लवण, हेमंतमें मधुर, रसको उत्पन्न करताहै ॥ २६ ॥

शिशिरादीनृतूनर्कश्चरन् पर्य्यायशो रसान् ॥ २७ ॥
विवर्द्धयेत्तथा तिक्तकषायकटुकान्क्रमात् ॥

अर्थ— शिशिरादिक तीन ऋतुवोंमें प्राप्त होता हुआ सूर्य्य क्रमसे तिक्त, कषाय, कटु इन तीनों रसोंको बढ़ातेहैं. अर्थात् शिशिरमें तिक्तको, वसंतमें कषायको, ग्रीष्ममें कटुको उत्पन्न करतेहैं ॥ २७ ॥

यथा रजन्यो वर्द्धन्ते बलमेकं हि वर्द्धते ॥ २८ ॥
क्रमशोऽथ मनुष्याणां हीयमानासु हीयते ॥

अर्थ— जैसे२ रात्रियां बढ़ती हैं वैसेही मनुष्योंका एक बल बढ़ताहै.॥२८॥ जैसे २ रात्रियां क्षीण होतीहैं वैसेही वैसे मनुष्योंकाभी बल क्षीण होताहै ॥

रात्रिभुक्तदिनानां च वयसश्च तथैव च ॥ २९ ॥
आदिमध्यावसानेषु कफपित्तसमीरणाः ॥
प्रकोपं यान्ति कोपादौ काले तेषां चयः स्मृतः ३०॥

अर्थ— रात्रि, भोजन, दिन, अवस्था इनके आदि मध्य अंतमें कफ पित्त वात ये कोप करतेहैं. जैसे रात्रिके

तीन भाग करै प्रथम भागमें कफ कोप करता है. द्वितीय भागमें पित्त कोप करता है तृतीय भागमें वात कोप करताहै. इसीतरह भोजन, दिन अवस्था इनको भी जानिये. कोपादिकालमें यानी जब इनका कोपका काल होताहै तब इनका एकत्र होनेका काल होताहै ॥ २९ ॥ ३० ॥

प्रकोपोत्तरके काले शमस्तेषां प्रकीर्तितः ॥
अतिभोजनतो विप्र तथा चाभोजनेन च ॥ ३१ ॥
रोगा हि सर्व्वे जायन्ते वेगोदीरणधारणैः ॥

अर्थ— हे विप्र ! प्रकोपके उत्तरकालमें कफादिकोंकी शांति रहतीहै. अधिक भोजनसे तथा न खानेसे तथा वेगके उदीरणसे यानी इच्छा विना मूत्र विष्ठा त्याग करनेसे तथा वेगधारणसे यानी इच्छा होनेपर भी मूत्रविष्ठाके रोकनेसे संपूर्ण रोग होते हैं ॥ ३१ ॥

अन्नेन कुक्षेर्द्वावंशावेकं पानेन पूरयेत् ॥ ३२ ॥
आश्रयं पवनादीनां तथैकमवशेषयेत् ॥

अर्थ— कुक्षिके दो अंश अन्नकरके पूरित करै, एक अंश जलसे पूरित करै, वायु इत्यादिकोंके जानेके वास्ते एक शेष रहनेदेवे ॥ ३२ ॥

व्याधेर्निदानस्य तथा विपरीतमथौषधम् ॥ ३३ ॥
कर्तव्यमेतदेवात्र मया सारं प्रकीर्तितम् ॥

अर्थ— व्याधि और निदानके विपरीत औषध करै यही हमकरके सारांश कहागया है. यानी जो शीतपदार्थके खानेसे रोग भया हो तौ उष्ण औषध करै ॥ ३३ ॥

नाभेरूर्ध्वमधश्चैव गुदश्रोण्योस्तथैव च ॥ ३४ ॥
बलासपित्तवातानां देहे स्थानं प्रकीर्तितम् ॥

अर्थ— नाभिके ऊर्ध्व और अधोभागमें कफका स्थान है, गुदाके ऊर्ध्व और अधोभागमें पित्तका स्थान है, जंघाके ऊर्ध्व और अधोभागमें वातका स्थान है ॥ ३४ ॥

तथापि सर्वगाश्चैते देहे वायुर्विशेषतः ॥ ३५ ॥

अर्थ— यद्यपि वातादिकोंके पृथक् पृथक् स्थान कहे गये हैं तथापि ये देहमें सर्वत्र रहते हैं. वायु तौ विशेषकरके देहमें सर्वत्र रहता है ॥ ३५ ॥

देहस्य मध्ये हृदयं स्थानं तन्मनसः स्मृतम् ॥
कृशोऽल्पकेशश्चपलो बहुवाग्विषमानलः ॥३६॥
व्योमगश्च तथा स्वप्ने वातप्रकृतिरुच्यते ॥

अर्थ— देहके मध्यमें हृदय होताहै सो मनका स्थान है॥ कृश यानी दुबला थोड़े केश हों, चपल हो, बहुत बातैं करै और जिसके विषमाग्नि हो, स्वप्नमें आकाशमें अपनेको चलता देखै ऐसा पुरुष वातप्रकृती है ॥ ३६ ॥

अकालपलितः क्रोधी प्रस्वेदी मधुरप्रियः ॥ ३७ ॥
स्वप्ने च दीप्तिमत्प्रेक्षी पित्तप्रकृतिरुच्यते ॥

अर्थ— अकालमें जिसके बार सफेद होजांय और क्रोधी हो, पसीना चलै, मधुर पदार्थ अच्छा लगै और स्वप्नमें तेजस्वी पुरुष वा पदार्थ देखै ऐसा पित्तप्रकृती पुरुष है३७

दृढाङ्गः स्थिरचित्तश्च सुप्रभः स्निग्धमूर्द्धजः ॥३८॥
शुद्धाम्बुदर्शी स्वप्ने च कफप्रकृतिको नरः ॥

अर्थ— दृढ़ अंग हों, स्थिर चित्त हो, उत्तम कांति हो, सचिक्कण केश हों,॥३८॥ स्वप्नमें स्वच्छ जल देखै ऐसा कफप्रकृती पुरुष है ॥

तामसा राजसाश्चैव सात्त्विकाश्च तथा स्मृताः॥३९॥
मनुष्या मुनिशार्दूल वातपित्तकफात्मकाः ॥

अर्थ— हे मुनिश्रेष्ठ ! तमोगुणी, रजोगुणी, सत्वगुणी, वातप्रकृती, पित्तप्रकृती, कफप्रकृती मनुष्य होतेहैं ॥ ३९ ॥

रक्तपित्तं व्यवायाच्च गुरुकर्मप्रवर्तनैः ॥ ४० ॥
कदन्नभोजनाद्वायुर्देहे शोकाच्च कुप्यति ॥

अर्थ— मैथुन और गुरु कर्म करनेसे रक्तपित्त होताहै॥ कुत्सित अन्न खानेसे और शोकसे भी देहमें वायु कोप करता है ॥ ४० ॥

विदाहिनां तथोक्तानामुष्णान्नाध्वनिषेविनाम्॥४१
पित्तं प्रकोपमायाति भयेन च तथा द्विज ॥

अर्थ— हे द्विज ! विदाही जो पदार्थ कहेगये हैं तिनके सेवनसे,उष्ण अन्न और मार्गके सेवनसे और भयसे भी पित्त कोप करता है ॥ ४१ ॥

अत्यम्बुपानगुर्वन्नभोजिनां भुक्तशायिनाम्॥४२॥
श्लेष्मा प्रकोपमायाति तथा ये चालसा जनाः ॥

अर्थ— अधिक जलपानसे, गरू अन्न खानेसे और भोजन करके शीघ्र सोजानेवालोंके॥४२॥और आलसियोंके श्लेष्मा कोप करताहै ॥

वाताद्युत्थानि रोगाणि ज्ञात्वा शाम्यानि लक्षणैः

अर्थ— वातादिकोंसे उत्थित रोगोंको लक्षणोंसे जानकर शांत करे ॥ ४३ ॥

अस्थिभङ्गः कषायात्वमास्ये शुष्कास्यता तथा ॥
जृम्भणं लोमहर्षश्च वातिकव्याधिलक्षणम् ॥ ४४ ॥

अर्थ— हड्फूटन, मुखमें बाखठपना, मुख शूखना, जमुहाई आना, रोमहर्ष होना ऐसे वातव्याधिके लक्षण हैं ॥४४

नखनेत्रशिराणां तु पीतत्वं कटुता मुखे ॥
तृष्णा दाहोष्णता चैव पित्तव्याधिनिदर्शनम्॥४५॥

अर्थ— नख, नेत्र, नसैं पीत हों, मुखमें कडुवापन रहै, तृष्णा और दाह व उष्णता हो ऐसे पित्तव्याधिके लक्षण हैं ४५

आलस्यं च प्रसेकश्च गुरुता मधुरास्यता ॥
उष्णभिलाषिता चेति श्लैष्मिकव्याधिलक्षणम् ४६

अर्थ— आलस्य रहै, पसीना बहै, देह गरू रहै, मुख मीठा रहै, उष्ण पदार्थ खानेकी इच्छा हो. ऐसे श्लैष्मिक व्याधिके लक्षण हैं ॥ ४६ ॥

स्निग्धोष्णमन्नमभ्यङ्गस्तैलपानादि वातनुत् ॥
आज्यं क्षीरं सिताद्यं च चन्द्ररश्म्यादि पित्तनुत्४७॥

अर्थ— स्निग्ध और उष्ण अन्न खाना, उबटन लगाना, तेल घृत इत्यादिकोंका पान करना वातनाशक है. घृत, दुग्ध, मिश्री आदि पदार्थ, चंद्रमाकी किरणोंका देहमें पड़ना ये पित्तनाशक हैं ॥ ४७ ॥

सक्षौद्रं त्रिफलातैलं व्यायामादि कफापहम् ॥
सर्वरोगप्रशान्त्यै स्याद्विष्णोर्ध्यानं च पूजनम् ४८॥

अर्थ-- शहत मिलाकर त्रिफलाका तैल लगाना, कस-
रत आदि परिश्रम करना, कफनाशक हैं॰ सम्पूर्ण रोगोंके
नाश करनेके वास्ते विष्णुका ध्यान और पूजन है ॥४८॥

इति श्रीआग्नेये महापुराणे सर्वरोगहराण्यौषधानि नामा-
शीत्यधिकद्विशततमोऽध्यायः ॥ २८० ॥

अथैकाशीत्यधिकद्विशततमाध्याये रसादिलक्षणम्

धन्वन्तरिरुवाच ॥ रसादिलक्षणं वक्ष्ये भेषजानां
गुणं शृणु॥रसवीर्य्यविपाकज्ञो नृपादीन् रक्षयेन्नरः १

अर्थ-- रसादिकोंके लक्षण कहते हैं–और औषधोंका
गुण सुनो॰ रस, वीर्य्य, विपाक, इनके जाननेवाला मनुष्य
राजा इत्यादिकोंकी रक्षा करै ॥ १ ॥

रसाः स्वाद्वम्ललवणाः सोमजाः परिकीर्तिताः ॥
कटुतिक्तकषायाणि तथाऽग्नेया महाभुज ॥ २ ॥

अर्थ— हे महाभुज! स्वादु, अम्ल, लवण ऐसे रस
सोमज हैं, यानी चंद्रमासे उत्पन्न हैं॰ कटु, तिक्त, कषाय
ऐसे रस आग्नेय हैं ॥ २ ॥

त्रिधा विपाको द्रव्यस्य कट्वम्ललवणात्मकः ॥
द्विधा वीर्य्यं समुद्दिष्टमुष्णं शीतं तथैव च ॥ ३ ॥

अर्थ— कटु, अम्ल, लवण ऐसा तीन प्रकारका द्रव्य-
का विपाक है और दोप्रकारका वीर्य्य है, एक शीत दूसरा
उष्ण ॥ ३ ॥

अनिर्देश्यप्रभावश्च ओषधीनां द्विजोत्तम ॥
मधुरश्च कषायाश्च तिक्तश्चैव तथा रसः ॥ ४ ॥

अर्थ—हे द्विजोत्तम ! ओषधियोंका प्रभाव अनिर्देश्य है यानी कहनेयोग्य नहीं है. मधुर, कषाय, तिक्त तीन प्रकारका रस है ॥ ४ ॥

शीतवीर्य्याः समुद्दिष्टाः शेषास्तूष्णाः प्रकीर्तिताः ॥
गुडूची तत्र तिक्ताऽपि भवत्युष्णाऽतिवीर्य्यतः॥५॥

अर्थ— शीत है वीर्य्य जिनका ऐसे रस कहेगये और जो शेष हैं वे उष्ण हैं. और गुरिच्च, तिक्त है; परंतु अतिवीर्य्यसे उष्ण है ॥ ५ ॥

उष्णा कषायाऽपि तथा पथ्या भवति मानद ॥
मधुरोऽपि तथा मांस उष्णएव प्रकीर्तितः ॥ ६ ॥

अर्थ— हड़ कषाय और उष्णभी है मांस मधुर और उष्ण है ॥ ६ ॥

लवणो मधुरश्चैव विपाकमधुरौ स्मृतौ ॥
अम्लोष्णश्च तथा प्रोक्तः शेषाः कटुविपाकिनः॥७॥

अर्थ— लवण मधुर ये रस विपाकमें मधुर हैं. अम्ल, उष्ण ये रसभी विपाकमें मधुर हैं, शेष रस विपाकमें कटु हैं७

वीर्य्यपाके विपर्य्यस्तं प्रभावात्तत्र निश्चयः ॥
मधुरोऽपि कटुः पाके यच्च क्षौद्रं प्रकीर्तितम् ॥ ८ ॥

अर्थ— वीर्य्यपाकमें रस विपरीत होता है. वहां प्रभावसे निश्चय होताहै. शहत मधुर है परंतु पाकमें कटु है ॥ ८ ॥

क्वाथयेत्षोडशगुणे पिबेद्द्रव्याच्चतुर्गुणम् ॥
कल्पनैषा कषायस्य यत्र नोक्तो विधिर्भवेत् ॥९॥

अर्थ— द्रव्यसे षोडशगुण जलमें औषधियोंको पकावै और द्रव्यसे चौगुना पान करै. काढ़ाकी यह कल्पना जहां

कोई विशेष विधि नहीं कही गई तहांपर ली जातीहै ॥९॥

कषाये तु भवेत्तोयं स्नेहपाके चतुर्गुणम् ॥
द्रव्यतुल्यं समुद्धृत्य द्रव्यं स्नेहे क्षिपेद्बुधः ॥ १० ॥

अर्थ— स्नेहपाकमें यानी घृततैलपाकमें जो काढ़ा पड़ता है उसमें स्नेहका चौगुना जल डारै. जब काढ़ा पकके पादशेष रहजाय तब द्रव्यकी तुल्य काढ़ेको निकालकर स्नेहमे छांड़ै और द्रव्यभी स्नेहमें छाँड़ै ॥ १० ॥

तावत्प्रमाणं द्रव्यस्य स्नेहपादं ततः क्षिपेत् ॥
तोयवर्ज्जं तु यद्द्रव्यं स्नेहद्रव्यं तथा भवेत् ॥ ११ ॥

अर्थ— द्रव्यकी उतनी प्रमाण डालनेकी है जितना स्नेह हो. तिसका चतुर्थांश सो स्नेहमें छाँड़ै, जिसमें जल न हो ऐसी जो द्रव्य है सो उसीतरह स्नेहकी तुल्य डालनी चाहिये ॥ ११ ॥

संवर्तितौषधः पाकः स्नेहानां परिकीर्तितः ॥
तत्तुल्यता तु लेह्यस्य तथा भवति सुश्रुत ॥ १२ ॥

अर्थ— हे सुश्रुत ! संवर्तितौषध यानी जब औषधमें वर्त्तियां बननेलगैं तब स्नेहका पाक हुआ जानना. तिसीप्रकार लेह्यभी होता है ॥ १२ ॥

स्वच्छमल्पौषधं क्वाथं कषायं चोक्तवद्भवेत् ॥
अक्षं चूर्णस्य निर्दिष्टं कषायस्य चतुष्पलम् ॥१३॥

अर्थ— स्वच्छ और अल्प औषध जिसमें हो वह क्वाथ है. चूर्णकी प्रमाण खानेमें सोलामासे और कषायकी प्रमाण खानेमें सोलामासे (आधपाव) है ॥ १३ ॥

मध्यमैषा स्मृता मात्रा नास्ति मात्राविकल्पना ॥
वयः कालं बलं वह्निं देशं द्रव्यं रुजं तथा ॥ १४ ॥

समवेक्ष्य महाभाग मात्रायाः कल्पना भवेत् ॥

अर्थ— हे महाभाग ! यह मध्यम मात्रा है और मात्रा की कल्पना नहीं है. अवस्था, काल, बल, अग्नि, देश, औषध, रोग ॥१४॥ इनको विचारके मात्राकी कल्पना करै

सौम्यास्तत्र रसाः प्रायो विज्ञेया धातुवर्द्धनाः १५॥
मधुरास्तु विशेषेण विज्ञेया धातुवर्द्धनाः ॥

अर्थ— सौम्यरस यानी चंद्रमाके रस बहुधा धातुवर्द्धक हैं और मधुररस विशेषकरके धातुवर्द्धक हैं ॥ १५ ॥

दोषाणां चैव धातूनां द्रव्यं समगुणं तु यत् ॥१६॥
तदेव वृद्धये ज्ञेयं विपरीतं क्षयावहम् ॥

अर्थ— दोष और धातुका तुल्य है गुण जिसका ऐसी जो है द्रव्य॥१६॥सो दोष और धातुको बढ़ाती है और जो द्रव्य विपरीत है यानी दोष और धातुवोंके समगुण नहीं है वह क्षीण करती है ॥

उपष्टम्भत्रयं प्रोक्तं देहेऽस्मिन्मनुजोत्तम ॥ १७ ॥
आहारो मैथुनंनिद्रा तेषु यत्नः सदा भवेत् ॥

अर्थ— हे मनुजोतम ! इस देहमें भोजन,मैथुन,निद्रा ये तीन उपष्टंभक हैं.॥१७॥तिनके विषे सदा यत्न करना चाहिये।

असेवनात्सेवनाच्च अत्यन्तं नाशमाप्नुयात् ॥ १८ ॥
क्षयस्य बृंहणं कार्य्यं स्थूलदेहस्य कर्षणम् ॥
रक्षणं मध्यकायस्य देहभेदास्त्रयो मताः ॥ १९ ॥

अर्थ— भोजनादिकोंके अत्यंत सेवनसे और असेवनसे देह नाशको प्राप्त होता है. क्षीणदेहको बढ़ाना चाहिये,स्थूल

देहका कर्षण करना चाहिये, मध्यदेहका रक्षण करना चाहिये. देहके तीन भेद हैं ॥१८॥१९॥

उपक्रमद्वयं प्रोक्तं तर्प्पणं वाप्यतर्प्पणम् ॥
हिताशी च मिताशी च जीर्णाशी च तथा भवेत्२०

अर्थ-- तर्प्पण, अतर्प्पण, ये दो उपक्रम हैं. हितभोजन करै, परिमित भोजन करै, अन्न पचनेपर भोजन करै॥२०॥

ओषधीनां पञ्चविधा तथा भवति कल्पना ॥
रसः कल्कः शृतः शीतः फाण्टश्च मनुजोत्तम ॥२१॥

अर्थ— हे मनुजोत्तम ! औषधियोंकी पांच प्रकारकी कल्पना होतीहै. रस, कल्क, शृत, शीत, फाण्ट ये पांच प्रकार हैं ॥ २१ ॥

रसश्च पीडको ज्ञेयः कल्क आलोडिताद्भवेत् ॥
क्वथितश्च शृतो ज्ञेयः शीतः पर्य्युषितो निशाम्२२॥

अर्थ— रस घोटनेसे होता है, कल्क बाँटकर बनता है, पकानेसे शृत होता है, रात्रिमें पानीमें मिलाकर रख दे तौ शीत होता है ॥ २२ ॥

सद्योऽभिशृतपूतं यत् तत्फाण्टमभिधीयते ॥
करणानां शतं चैव षष्टिश्चैवाधिका स्मृता ॥ २३ ॥

अर्थ— शीघ्र पकानेसे जो पवित्र भया उसको फाण्ट कहतेहैं. और एकसै साठ दोष हैं ॥ २३ ॥

यो वेत्ति स ह्यजयः स्यात्सम्बन्धे बहुशौण्डिकः ॥
आहारशुद्धिरक्ष्यर्थमग्निमूलं बलं नृणाम् ॥ २४ ॥

अर्थ— जो यह जानता है; वह पुरुष अजेय होजाता है, और सम्बन्धमें बहुशौण्डिक यानी अत्यन्त प्रवीण

होताहै. अग्निके वास्ते भोजनकी शुद्धि चाहिये क्योंकि मनुष्योंके बलका मूल अग्नि है ॥ २४ ॥

ससिन्धुत्रिफलां चाद्यात्सुराज्ञि अभिवर्णदाम् ॥
जाङ्गलं च रसं सिन्धुयुक्तं दधि पयः कणाम् ॥२५॥
रसाधिकं समं कुर्य्यान्नरो वाताधिकोऽपि वा ॥

अर्थ— सेंधवयुक्त त्रिफलाका भक्षण करै तौ राजाका सुंदर वर्ण होजाता है. जंगली जीवोंके मांसका रस, सेंधवयुक्त दही, पिपरीयुक्त दुग्ध भक्षण करै, ॥२५॥ और जिसके वातका आधिक्य हो वह मांसका रस अधिक डालै और सब समभाग डालै ॥

निदाघे मर्दनं प्रोक्तं शिशिरे च समं बहु ॥ २६ ॥

अर्थ— निदाघमें यानी ज्येष्ठ आषाढमें तैल मर्दन करना योग्य है और शिशिरमें यानी कुवार कार्तिकमें बहुत और सम मर्दन करै ॥ २६ ॥

वसन्ते मध्यमं ज्ञेयं निदाघे मर्दनोल्बणम् ॥
त्वचन्तु प्रथमं मर्द्यमङ्गं च तदनन्तरम् ॥ २७ ॥

अर्थ— वसंतमें मध्यम मर्दन करै. निदाघमें यानी ज्येष्ठ आषाढमें खूब मर्दन करै. और त्वचाका प्रथम मर्दन करै पश्चात्संपूर्ण अंगोंका मर्दन करै ॥ २७ ॥

स्नायुरुधिरदेहेषु अस्थि भातीव मांसलम् ॥
स्कन्धौ बाहू तथैवेह तथा जङ्घे सजानुनी ॥२८॥

अर्थ— स्नायु, रुधिर, देह इनके विषे अस्थि बड़े मोटे जान पड़तेहैं. दोनो कंधा, दोनो बाहू, दोनो जंघा, दोनो जानु ॥ २८ ॥

अरिवन्मर्दयेत्प्राज्ञो जत्रुवक्षश्च पूर्ववत् ॥
अङ्गसन्धिषु सर्व्वेषु निष्पीड्य बहुलं तथा ॥ २९ ॥
प्रसारयेदङ्गसन्धीन्न च क्षेपेण चाक्रमात् ॥

अर्थ— पूर्वोक्त अंगोंको शत्रुकी तरह मर्दन करै. जत्रु यानी गलेके हँसिया वक्ष यानी छाती इनको पूर्ववत् मर्दन करै और अंगसंधियोंको खूब मर्दन करके ॥ २९ ॥ क्रमसे फैलायदेय और क्षेप न करै ॥

नाऽजीर्णे तु श्रमं कुर्य्यान्न भुक्त्वा पीतवान्नरः॥३०॥

अर्थ—अजीर्णमें श्रम न करै. भोजन करके श्रम न करै. जलपान करके, श्रम न करै ॥ ३० ॥

दिनस्य तु चतुर्भागे ऊर्ध्वं तु प्रहरार्द्धके ॥
व्यायामं नैव कर्त्तव्यं स्नायाच्छीताम्बुना सकृत्३१॥

अर्थ— दिनके चौथे भागमें आधे पहरके उपरान्त व्यायाम यानी कसरत इत्यादि परिश्रम न करै, शीत जलसों एकवार स्नान करै ॥ ३१ ॥

वार्य्युष्णं च श्रमं जह्याद्धृदा श्वासन्न धारयेत् ॥
व्यायामश्च कफं हन्याद्वातं हन्याच्च मर्दनम् ॥३२॥

अर्थ— उष्ण जलसे स्नान करना श्रमको दूर करता है, और हृदयमें श्वासको न रोकै. कसरत इत्यादि श्रम कफको नाश करताहै, तैल लगाना वातको नाश करता है॥ ३२ ॥

स्नानं पित्ताधिकं हन्यात्तस्यान्ते चातपाः प्रियाः॥
आतपक्लेशकर्मादौ क्षमव्यायामिनो नराः ॥ ३३ ॥

अर्थ— स्नान पित्ताधिक्यको नाश करताहै, तिसके अंतमें घाम प्रिय होताहै, जिस कर्ममें घाम लगै और क्लेश

हो ऐसे कर्मोंमें जो मनुष्य व्यायाम यानी कसरत इत्यादि श्रम करता है सो क्षेमी पुरुष होता है ॥ ३३ ॥

इत्याग्नेये महापुराणे आयुर्वेदे एकाशीत्यधिक-
द्विशततमोऽध्यायः ॥ २८१ ॥

अथ द्व्यशीत्यधिकद्विशततमाध्याये वृक्षायुर्वेदः ॥

धन्वन्तरिरुवाच ॥

वृक्षायुर्व्वेदमाख्यास्ये प्लक्षश्चोत्तरतः शुभः ॥
प्राग्वटो याम्यतस्त्वाम्र आप्येऽश्वत्थः क्रमेण तु ॥१॥

अर्थ-- धन्वन्तरि महाराज सुश्रुतसे बोले-- हम वृक्षायुर्वेद कहतेहैं--उत्तर दिशामें पकरिया, पूर्वमें बरगद, दक्षिणमें आम्र, पश्चिममें पिप्पल शुभ है ॥ १ ॥

दक्षिणां दिशमुत्पन्नाः समीपे कण्टकद्रुमाः ॥
उद्यानं गृहवासे स्यात्तिलान्वाप्यथ पुष्पितान्॥२॥
गृह्णीयाद्रोपयेद्वृक्षान् द्विजं चन्द्रं प्रपूज्य च ॥

अर्थ-- दक्षिण दिशामें ग्रामके समीप कंटकयुक्त वृक्ष उत्पन्न हुये शुभ हैं और गृहके समीप उद्यान शुभ है. तिल अथवा फूले वृक्षको हाथमें लेकर और चंद्रमा वा ब्राह्मण इनकी पूजाकर वृक्षोंको लगावै ॥ २ ॥

ध्रुवाणि पञ्च वायव्यं हस्तं प्राजेशवैष्णवम् ॥३॥
नक्षत्राणि तथा मूलं शस्यन्ते द्रुमरोपणे ॥

अर्थ-- ध्रुवसंज्ञक पांच यानी उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा रोहिणी, रविवार स्वाती, हस्त, ज्येष्ठा, श्रवण, मूल, ये नक्षत्र वृक्ष लगानेमें श्रेष्ठ हैं ॥ ३ ॥

प्रवेशयेन्नदीवाहान् पुष्करिण्यां तु कारयेत् ॥ ४ ॥
हस्तो मघा तथा मैत्रमाद्यं पुष्यं सवासवम् ॥
जलाशयसमारम्भे वारुणं चोत्तरात्रयम् ॥ ५ ॥

अर्थ— हस्त, मघा, अनुराधा, अश्विनी, पुष्य, धनिष्ठा, शतभिषा, उत्तराफल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा, ये नक्षत्र जलाशय खननेमें श्रेष्ठ हैं ॥ ४ ॥ ५ ॥

सम्पूज्य वरुणं विष्णुं पर्ज्जन्यं तत्समाचरेत् ॥
अरिष्टाशोकपुन्नागशिरीषाः सप्रियंगवः ॥ ६ ॥

अर्थ— वरुण, विष्णु, इन्द्र, इनको पूजकर जलाशय खनै. रीठी, अशोक, नागकेसर, सेरसा, मालकाँगनी, ॥६॥

अशोकः कदली जम्बुस्तथा बकुलदाडिमाः ॥
सायं प्रातस्तु घर्मार्तौ शीतकाले दिनान्तरे ॥ ७ ॥
वर्षारात्रौ भुवःशोषे सेक्तव्या रोपिता द्रुमाः ॥
उत्तमं विंशतिर्हस्ता मध्यमं षोडशान्तरम् ॥ ८ ॥

अर्थ-- अशोक, केला, जमुनी, मोमसिरी, अनार इत्यादि वृक्षोंको ग्रीष्म ऋतुमें यानी ज्येष्ठ आषाढ़में सायंकाल प्रातःकाल सींचै, शीतकालमें सायंकाल सींचै, वर्षाऋतुमें यानी सावन भादोंमें जब पृथ्वी शूख जाय तब सींचै और बीस बीस हाथके अंतरमें वृक्षोंका लगाना उत्तम है. सोला सोला हाथके अंतरमें लगाना मध्यम है ॥ ७ ॥ ८ ॥

स्थानात्स्थानान्तरं कार्य्यं वृक्षाणां द्वादशावरम् ॥
विफलाः स्युर्घना वृक्षाः शस्त्रेणादौ हि शोधनम् ९॥

अर्थ— बारा बारा हाथके अंतरमें लगाना अवर यानी निकृष्ट है- सघन वृक्ष विफल होवेहैं इसीकारणसे शस्त्रों-

करके शोधन करै; पानी सघन वृक्षोंको काट छाँटकर दुरस्त करै ॥ ९ ॥

विडङ्गघृतपङ्काक्तान्सेचयेच्छीतवारिणा ॥
फलनाशे कुलत्थैश्च मांसैर्मुद्गैर्यवैस्तिलैः ॥ १० ॥

अर्थ— वायविडंग घृत इनको एकमें मिलाकर वृक्षकी जड़पर डाले पश्चात् शीतजलसे सींचै. जिसमें फूल न लगते हों उसमें खुरथी, मांस, मूँग, यव, तिल इनका चूर्ण बनाकर जलमें मिलाकर छोंड़े ॥ १० ॥

घृतशीतपयःसेकः[१] फलपुष्पाय सर्वदा ॥
आविकाजशकृच्चूर्णं यवचूर्णं तिलानि च ॥ ११ ॥

अर्थ— घृत, शीतजल, या दूध मिलाकर सींचै तो सदा फल पुष्प होतेहैं. भेड़ी, बकड़ीके गोबरका चूर्ण और यवका चुर्ण, तिल, ॥ ११ ॥

गोमांसमुदकं चैव सप्तरात्रं निधापयेत् ॥
उत्सेकः सर्ववृक्षाणां फलपुष्पादिवृद्धिदः ॥ १२ ॥

अर्थ— और गोमांस, जल, इन संपूर्ण पदार्थोंको सात रोज मिलाकर धरै पश्चात् इसीसे सींचै तो सम्पूर्ण वृक्षोंमें फल पुष्पादिकोंकी वृद्धि होतीहै ॥ १२ ॥

मत्स्याम्भसा तु सेकेन वृद्धिर्भवति शाखिनः ॥
विडङ्गतण्डुलोपेतं मत्स्यं मांसं हि दोहदम् ॥ १३ ॥
सर्वेषामविशेषेण वृक्षाणां रोगमर्दनम् ॥

---

१ "घृतेन पयसा सेकः" इति पाठः क्वाचित्कः ॥

अर्थ—मत्स्ययुक्त जलसे सींचै तौ वृक्षकी वृद्धि होतीहै. वायविडंग, चावल, मछली, मांस ये संपूर्ण वृक्षोंको बढ़ाते हैं और संपूर्ण वृक्षरोगोंको हरलेतेहैं ॥ १३ ॥

इत्याग्नेये महापुराणे वृक्षायुर्वेदकथनं नाम द्व्यशीत्यधिक-द्विशततमोऽध्यायः ॥ २८२ ॥

अथ त्र्यशीत्यधिकद्विशततमोऽध्याये नानारोगहराण्यौषधानि ॥

बालचिकित्सा ॥

धन्वन्तरिरुवाच ॥

सिंही शटी निशायुग्मं वत्सकं क्वाथसेवनम् ॥
शिशोः सर्वातिसारेषु स्तन्यदोषेषु शस्यते ॥ १ ॥

अर्थ— छोटी कटैयाकी जड़, कचूर, हलदी, दारुहलदी, कुरैयाकी छाली इनका काढ़ा संपूर्ण बालकोंके अतीसारोंमे और स्तन्यदोषमें हित है ॥ १ ॥

शृङ्गीं सकृष्णातिविषां चूर्णितां मधुना लिहेत् ॥
एका चातिविषा कासच्छर्दिज्वरहरी शिशोः॥ २॥

अर्थ— ककरासिंगी, पिपरी, अतीस इनका चूर्ण शहत मिलाकर भक्षण करै. केवल एक अतीसही बालकके कास, छर्दि, व ज्वरको नाश करदेतीहै ॥ २ ॥

बालैः सेव्या वचा साज्या सदुग्धा वाऽथ तैलयुक्॥
यष्टिकां शङ्खपुष्पीं वा बालः क्षीरान्वितां पिबेत् ३

अर्थ—बालकोंकरके घृतयुक्त अथवा दुग्धयुक्त अथवा तैलयुक्त मीठी वच भक्षण करना चाहिये और जेठीमधु अथवा शंखपुष्पी (कौड़ेला) दुग्धमें मिलाकर बालक पान करै ३

वाग्रूपसम्पद्युक्तायुर्मेधा श्रीर्वर्धते शिशोः ॥
वचा ह्यग्निशिखा वासा शुण्ठी कृष्णा निशा गदम्४
सयष्टिसैन्धवं बालः प्रातर्मेधाकरं पिबेत् ॥

अर्थ— तौ बालक, वाणी, रूप, संपत् इनसे युक्त होताहै और बुद्धि, आयु, श्री ये बढ़ते हैं॰ वच, चौराईका शाक, रूसकी जड़, सोंठ, पिपरी, हलदी, पुहकरमूल, जेठीमधु, सेंधव इनको बालक प्रातःकाल बुद्धि बढ़नेके वास्ते पान करै ॥ ४ ॥

देवदारुमहाशिग्रुफलत्रयपयोमुचाम् ॥
क्काथः सकृष्णामृद्वीकाकल्कः सर्वान् कृमीन् जयेत्

अर्थ—देवदारु, सहिंजनकी छाली, त्रिफला,नागरमोथा इनका काढा पिपली और दाखके कल्कसे युक्त पान करै, तौ संपूर्ण कीड़ोंको नाश करताहै ॥ ५ ॥

त्रिफलाभृङ्गविश्वानां रसेषु मधुसर्पिषोः ॥
मेषीक्षीरे च गोमूत्रे सिक्तं रोगे हितं शिशोः ॥६॥

अर्थ— त्रिफला, भँगिरा, सोंठ,शहत, घृत इनका रस भेड़ीके दूधमें और गोमूत्रमें मिलाकर बालकके रोगमें युक्त करै तौ हितकारक होताहै ॥ ६ ॥

नासारक्तहरो नस्याद्दूर्वारस इहोत्तमः ॥ ७ ॥

अर्थ— दूबके रसका नास लेनेसे नाकका रक्त नष्ट होजाता है ॥ ७ ॥

लसुनार्द्रकशिग्रूणां रसः कर्णस्य पूरणम् ॥
तैलमार्द्रकजात्यं वा शूलहा चोष्ठरोगनुत् ॥ ८ ॥

अर्थ--लहसुन, आद, सहिंजनके पत्ता इनका रस कानमें छोंड़नेसे पूर्ण करदेताहै. आद अथवा चमेलीके फूलोंसे सिद्ध किया तेल लगानेसे ओष्ठरोगको नाशता है. और शूलमें प्रयुक्त किया शूलको नष्ट करता है ॥ ८ ॥

जातीपत्रं फलं व्योषं कवलं मूत्रकं निशा ॥
दुग्धक्वाथेऽभयाकल्के सिद्धं तैलं द्विजार्तिनुत् ॥९॥

अर्थ— जावत्री, जायफर, सोंठ, पीपर, मिरिच, कमलके बीज, गोमूत्र, हलदी, ये सब दवा दुग्धमें पचाय हड़के कल्कमें डालै उसीमें सिद्ध किये तेलके लगानेसे दांतोंकी पीडा नष्ट होजातीहै ॥ ९ ॥

धान्याम्बु नारिकेलं वा गोमूत्रं क्रमुकविश्वयुक् ॥
क्वाथितं कवलं कार्य्यमधिजिह्वाधिशान्तये ॥१०॥

अर्थ— धनिया, सुगंधबाला, नारियरकी गरी, गोमूत्र, सुपारी, सोंठ इनका काढ़ा बनाकर अधिजिव्हको शांतिके वास्ते कवलविधि करै ॥ १० ॥

साधितं लाङ्गलीकल्के तैलं निर्गुण्डिकारसैः ॥
गलगण्डं गण्डमालां नाशयेन्नस्यकर्मणा ॥ ११ ॥

अर्थ— करियारीके कल्कमें म्पोड़ीकी पत्तीका रस डाल उसीमें सिद्ध किया तेल नस्यविधिसे युक्त करनेसे गलगण्ड, गण्डमाला इनको नाश करताहै ॥ ११ ॥

पल्लवैरर्कपूतीकस्नुहीरुग्घातजातिकैः ॥
उद्वर्त्तयेत्सगोमूत्रैः सर्वत्वग्दोषनाशनैः ॥ १२ ॥

अर्थ— मदार, कंज, थोहर, किरवार, चमेली इनके पल्लव गोमूत्रमें पीसकर उबटन लगावै तौ संपूर्ण त्वग्दोष नष्ट होजातेहैं ॥ १२ ॥

वाकुची सतिला भुक्ता वत्सरात्कुष्ठनाशिनी ॥
पथ्या भल्लातकी तैलगुडपिण्डी तु कुष्ठजित् १३॥

अर्थ— तिलयुक्त बकुचीके बीज एक वर्ष खानेसे कुष्ठ नष्ट होताहै. हड़, शुद्ध भेलावेंका तेल, गुड़ इनकी पिण्डीके खानेसे कुष्ठ नष्ट होताहै ॥ १३ ॥

यूतीकवह्निरजनीत्रिफलाव्योषचूर्णयुक् ॥
तक्रं गुदाङ्कुरे पेयं भक्ष्या वा सगुडाऽभया ॥१४॥

अर्थ— कंजकी गूदी, चीतकी जड़, हलदी, त्रिफला, सोंठ, पीपर, मिरिच इनके चूर्ण करके युक्त माठा अर्शरोगमें पान करै. अथवा गुडयुक्त हड़का चूर्ण भक्षण करै ॥ १४ ॥

फलदार्वीविषाणां तु क्वाथो धात्रीरसोऽथवा ॥
पातव्यो रजनीकल्कः क्षौद्राक्षौद्रप्रमेहिणा ॥१५॥

अर्थ— जायफर, दारुहलदी, कमलके केसर इनका काढ़ा अथवा अवरांका रस अथवा हलदीका कल्क क्षौद्र और अक्षौद्र प्रमेहवाला मनुष्य पान करै ॥ १५ ॥

वासागर्भो व्याधिघातक्वाथ एरण्डतैलयुक् ॥
वातशोणितहृत्पानात्पिप्पली स्यात्प्लिहाहरी॥१६॥

अर्थ— रूसकी जड़, किरवार इनका काढ़ा रेंड़ीका तैल मिलाकर पान करै तौ वातरक्तका नाश होताहै. और पिपलीके खानेसे प्लीहा नष्ट होताहै ॥ १६ ॥

सेव्या जठरिणा कृष्णा स्नुक्क्षीरबहुभाविता ॥
पयो वा रुच्यदन्त्यग्निविडङ्गव्योषकल्कयुक् ॥१७॥

अर्थ— जठररोगी थोहरके दूधकी बहुत भावना देकर

पिपलीका चूर्ण भक्षण करै. अथवा सोचर, जमालगोटाकी जड़, चीतकी जड़, बायविडंग, सोंठ, पीपल, मिरिच, इनके कल्कसे युक्त दुग्ध पान करै ॥ १७ ॥

ग्रन्थिकोग्राऽभया कृष्णा विडङ्गाक्ता घृते स्थिता॥
मासं तक्रं ग्रहण्यर्शःपाण्डुगुल्मक्रिमीन्हरेत् ॥१८॥

अर्थ— पीपरामूल, वच, हड़की छाल, पिपली, बायविडंग, इनका चूर्ण एक मास घृतमें मिलाकर रखदे पश्चात् तक्रमें मिलाकर भक्षण करै तौ ग्रहणी, अर्श, पाण्डु, गुल्म, क्रिमि इनका नाश करताहै ॥ १८ ॥

फलत्रयाऽमृता वासा तिक्तभूनिम्बजस्तथा ॥
क्वाथः समाक्षिको हन्यात्पाण्डुरोगं सकामलम्१९

अर्थ— त्रिफला, गुरच, रूसकी जड़, कुटकी, चिरायता इनका काढ़ा बनाकर शहत मिलाकर पान करै तौ पाण्डु, कामला इन रोगोंको नष्ट करताहै ॥ १९ ॥

रक्तपित्ती पिबेद्वासास्वरसं ससितं मधु ॥
वरीद्राक्षाबलाशुण्ठीसाधितं वा पयः पृथक् ॥२०॥

अर्थ— रक्तपित्तरोगी शहत चिनी मिलाकर रूसके पत्तोंका स्वरस पान करै. अथवा सतावर, दाख, बरियारीकी जड़, सोंठ इनकरके साधित दुग्ध पान करै ॥ २० ॥

वरी विदारी पथ्या च बलात्रयं सवासकम् ॥
श्वदंष्ट्रामधुसर्पिर्भ्यामालिहेत्क्षयरोगवान् ॥ २१ ॥

अर्थ— क्षयरोगी सतावर, बिलारीकंद, हड़की बकली, बरियारी, गुरुसकरी, ककई इनकी, जड़ रूसकी जड़, गोखुरू बड़ी, इनका चूर्ण शहत घृत मिलाकर खाय ॥ २१ ॥

पथ्याशिग्रुकरञ्जार्कत्वक्सारं मधुसिन्धुमत् ॥
समूत्रं विद्रधिं हन्ति परिपाकाय तन्त्रजित्॥२२॥

अर्थ— हड़की छाली, सहिंजनकी छाली, कंजके सुनगा, धतूरा, बांसकी पाती, शहत, सैंधव ए सब गोमूत्रमें पीसकर लेप करै तौ विद्रधि पाककर नष्ट होजातीहै ॥२२॥

त्रिवृता जीवनी दन्ती मञ्जिष्ठा शर्वरीद्वयम् ॥
तार्क्षजं निम्बपत्रं च लेपः शस्तो भगन्दरे॥ २३ ॥

अर्थ— तिधारू, जीवनी प्रसिद्ध, दतूनकी जड़, मंजीठ, हलदी, दारुहलदी, रसवँत, नींबके पत्ता इनका लेप भगन्दरमें हित है ॥ २३ ॥

रुग्घातरजनीलाक्षाचूर्णाजक्षौद्रसंयुता ॥
वासोवर्तिर्व्रणे योज्या शोधनी गतिनाशिनी ।२४।

अर्थ— किरवारकी गूदी, हलदी, लाह, चून, ककरासिंगी, शहत इनका चूर्ण शहतमें मिलाय कपड़ाकी बत्ती बनाय व्रणमें योजित करै तौ शुद्ध करदेतीहै और बढ़ना कम हो जाताहै ॥ २४ ॥

श्यामायष्टिनिशालोध्रपद्मकोत्पलचन्दनैः ॥
समरीचैः शृतं तैलं क्षीरे स्याद्व्रणरोहणम् ॥ २५ ॥

अर्थ— कारीसाँव, जेठीमधु, हलदी, लोध पठानी, कमल और कोकाबेरीके बीज, चंदन लाल, मिरिच ये सब दुग्धमें पीसकर उसीमें तेल पचवै पश्चात् इसके लगानेसे व्रण पूरित होजाताहै ॥ २५ ॥

श्रीकार्प्पासदलैर्भस्म फलोपलवणा निशा ॥
तत्पिण्डीस्वेदनं ताम्रे तत्तैलं स्यात्क्षतौषधम् ॥२६॥

अर्थ— बेल कपास इनकी पत्तीकी भस्म, जायफर, खारी निमक, हल्दी इनकी पिण्डी बनाकर ताम्रके पात्रमें धरके उसीका स्वेदन करै. जो तैल उसमें निकलै उसीका व्रणमें लेप करै ॥ २६ ॥

कुम्भीसारं पयोयुक्तं वह्निदग्धं व्रणे लिपेत् ॥
तदेव नाशयेत्सेकान्नारिकेलरजो घृतम् ॥ २७ ॥

अर्थ— कैफरा दूधमें पीसकर अग्निमें पकाकर व्रणमें लेप करै. अथवा नारिकेलके जटाकी भस्म और घीसे सेक करै तौ व्रण अच्छा होताहै ॥ २७ ॥

विश्वाजमोदसिन्धूत्थचिञ्चात्वग्भिः समाऽभया ॥
तक्रेणोष्णाम्बुना वाऽथ पीताऽतीसारनाशिनी २८

अर्थ— सोंठ, अजमोदा, सेंधव, अँबिलीकी छाल, सबकी समान हड़की छाल इनका चूर्ण माठामें मिलाकर पान करै अथवा उष्ण जलसे पान करै तौ अतीसारको नष्ट करदेतीहै ॥ २८ ॥

वत्सकातिविषाविश्वबिल्वमुस्तशृतं जलम् ॥
सामे पुराणेऽतीसारे सासृक्शूले च पाययेत् ॥२९॥

अर्थ— कुरैयाकी छाली, अतीस, सोंठ, वेलकी गूदी, नागरमोथा इनका काढ़ा बनाकर पान करै तौ आमसहित पुराना अतीसार और रक्तविकारसहित शूल नष्ट होतेहैं २९

अङ्गारदग्धं सुगतं सिन्धुमुष्णाम्बुना पिबेत् ॥
शूलवानथवा तद्धि सिन्धुहिङ्गुकणाऽभयाः ॥३०॥

अर्थ— शूलवान् अंगारमें सेंधव खूब तपाकर उष्ण जलसे पान करै अथवा सेंधव,हींग, पिपरी,हड़की छाल ३० ॥

कटुरोहित्कणाऽऽतङ्कलाजचूर्णं मधुप्लुतम् ॥
वस्त्रच्छिद्रगतं वक्रे न्यस्तं तृष्णां विनाशयेत् ॥३१॥

अर्थ— कुटकी, रोहित (लताभेद),पिपरी,पुहकरमूल,लाई इनका चूर्ण शहतमें मिलाकर वस्त्रमें धरके मुखमें निचोयके डालै तौ तृषाका नाश होजाता है ॥ ३१ ॥

पाठा दार्वी जातिदलं द्राक्षामूलफलत्रयैः ॥
साधितं समधु क्वाथं कवलं मुखपापहृत् ॥ ३२ ॥

अर्थ— पाढ़ीको जड़, दारुहलदी, चमेलीकी पत्ती, दाख, पिपरामूल, त्रिफला इनके काढ़ेमें शहत मिलाकर कवलविधि करै तौ मुखरोग नष्ट होते हैं ॥ ३२ ॥

कृष्णातिविषतिक्तेन्द्रदारुपाठापयोमुचाम् ॥
क्वाथो मूत्रे शृतः क्षौद्री सर्वकण्ठगदापहः ॥ ३३ ॥

अर्थ— पिपरी, अतीस, कुटकी, देवदारु, पाढ़ीकी जड़, नागरमोथा इनका काढ़ा शहत मिलाकर खाय तौ संपूर्ण गलके रोगोंको नष्ट करदेताहै ॥ ३३ ॥

पथ्यागोक्षुरदुःस्पर्शराजवृक्षशिलाभिदाम् ॥
कषायः समधुः पीतो मूत्रकृच्छ्रं व्यपोहति ॥३४॥

अर्थ— हड़की छाल, गोखुरू बड़ा, जवासकी जड़, किरवारकी गूदी, पाषाणभेद इनका काढ़ा शहत मिलाकर खाय तौ मूत्रकृच्छ्रको नष्ट कर देताहै ॥ ३४ ॥

वंशत्वग्वरुणाक्काथः शर्कराश्मविघातनः ॥
शाखोटक्काथं सक्षौद्रं क्षीराशी श्लीपदी पिबेत् ।३५।

अर्थ— बांसकी छाली, वरुनाकी छाली इनका काढ़ा पान करै तौ शर्करा अश्मरी इनको नष्ट करदेता है

सिहोरकी छालीका काढ़ा शहत मिलाकर खाय तौ और दुग्ध भोजन करै तौ श्लीपदरोग नष्ट होजाताहै ॥ ३५ ॥

माषार्कत्वक्पयस्तैलं मधुसिक्थं च सैन्धवम् ॥
पादरोगं हरेत्सर्पिर्जलकुक्कुटजं तथा ॥ ३६ ॥

अर्थ— उरदका चूर्ण,मदारकी जड़, तज, मोम, सेंधव, गोदुग्धमें पीसकर उसी दूधमें तैल पचवै पश्चात् इसी तैलको लगावै अथवा जलके मुर्गाकी वस लगावै तौ पादरोग नष्ट होते हैं ॥ ३६ ॥

शुण्ठीसौवर्चलाहिङ्गुचूर्णं शुण्ठीरसैर्वृतम् ॥
रुजं हरेदथ क्वाथो विद्धि बद्धाग्निसाधने ॥ ३७ ॥

अर्थ— सोंठ, सोंचर, हींग इनका चूर्ण सोंठके रस-करके युक्त भक्षण करै तौ अग्नि प्रज्वलित होतीहै ॥ ३७ ॥

सौवर्चलाग्निहिङ्गूनां सदीप्यानां रसैर्युतम् ॥
विडदीप्यकयुक्तं वा तक्रं गुल्मातुरः पिबेत् ॥३८॥

अर्थ—सोचर, चीतकी जड़, हींग, अजमोदा इनके रसकरकै युक्त अथवा साँभर, अजमोदा इनके चूर्ण करके युक्त माठा गुल्मरोगी पान करै ॥ ३८ ॥

धात्रीपटोलमुद्गानां क्वाथः साज्यो विसर्पहा ॥
शुण्ठीदारुनवाक्षीरक्वाथो मूत्रान्वितोऽपरः ॥३९॥

अर्थ—आँवरा, परवरके पत्ता, मूंग इनका काढ़ा घृत मिलाकर भक्षण करै तौ विसर्परोग नष्ट होजाताहै. अथवा सोंठ, देवदारु, गदापुन्नाकी जड़, दूध इनका काढ़ा गोमूत्र मिलाकर पान करै ॥ ३९ ॥

सव्योषायोरजःक्षारः फलक्काथश्च शोथहृत् ॥
गुडशिग्रुत्रिवृद्भिश्च सैन्धवानां रजोयुतः ॥ ४० ॥
त्रिवृताफलकक्काथः सगुडः स्याद्विरेचनः ॥

अर्थ— सोंठ, पीपर, मिरिच, कांतीसार, त्रिफला इनके क्काथके सेवन करनेसे शोथ नष्ट होताहै. गुड, सहिं-जनकी छाली, तिधारु, सेंधव इनके चूर्णकरके युक्त॥ ४० ॥ तिधारु, त्रिफला,गुड़ इनका काढ़ा पिये तौ विरेचन होताहै॥

वचाफलकषायोत्थं पयो वमनकृद्भवेत् ॥ ४१ ॥

अर्थ— वच, त्रिफला, इनको दूधमें पचावै उसी दुग्ध-का पान करै तौ वमन होताहै ॥ ४१ ॥

त्रिफलायाः पलशतं पृथग्भृङ्गजभावितम् ॥
विडङ्गं लोहचूर्णं च दशभागसमन्वितम् ॥ ४२ ॥

अर्थ— त्रिफला नम्बरी साढ़ेतीनसेर एक छटाँक भंगि-राके रसमें भावना देय वायबिडंग, कांतीसार, नम्बरी डेढ़ डेढ़ पाव ॥ ४२ ॥

शतावरीगुडूच्यग्निपलानां शतविंशतिः ॥
मध्वाज्यतिलजैर्लिह्याद्वलीपलितवर्जितः ॥ ४३ ॥
शतमब्दं हि जीवेत सर्वरोगविवर्जितः ॥

अर्थ— सतावर, गुरच, चीतकी जड़ ये सब नम्बरी बारसेर एक पाव आधी छटांक पृथक् पृथक् लेवे ये सब एकत्र करके शहत,घृत, तिलका तेल मिलाकर खाय तौ वली पलितसे निर्मुक्त होजाताहै ॥ ४३ ॥ संपूर्णरोगोंसे निर्मुक्त होकर सौ १०० वर्षपर्यन्त जीवताहै॥

त्रिफला सर्वरोगघ्नी समधुः शर्करान्विता ॥ ४४ ॥

अर्थ— चिनी शहत मिलाकर त्रिफलाका सेवन करै तौ सम्पूर्ण रोग नष्ट होजातेहैं ॥ ४४ ॥

सितामधुघृतैर्युक्ता सकृष्णा त्रिफला तथा ॥
पथ्याचित्रकशुण्ठयस्तु गुडूची मुषलीरजः ॥ ४५ ॥
सगुडं भक्षितं रोगहरं त्रिशतवर्षकृत् ॥

अर्थ— चिनी, शहत, घृत, पिपरी, इनकरके युक्त भी त्रिफला सेवन करनेसे सपूर्ण रोगोंको नष्ट करती है. हड़की बकली, चीतकी जड़,सोंठ,गुरिच,मूसरि सपेद, ॥ ४५ ॥ इनका चूर्ण गुड मिलाकर खाय तौ सपूर्ण रोगोंको नष्ट कर तीनसै वर्षकी आयु कर देती है ॥

किञ्चिच्चूर्णं जपापुष्पं पिण्डितम्विसृजेज्जले ॥ ४६ ॥
तैलं भवेद् घृताकारं किञ्चिच्चूर्णं जलान्वितम् ॥
धूपेन दृश्यते चित्रं वृषदंशजरायुणा ॥ ४७ ॥

अर्थ— थोड़ा चूना, गुड़हरका फूल, तेल इनकी पिंडी बनाकर जलमें डालै फिर डालनेसे वह घीकी तरह हो जाताहै. वही थोड़ा घी और बिलारीकी थोड़ी झर एकमें मिलाकर अग्निमें धरै तौ चित्र विचित्र देखपड़ता है ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

पुनर्माक्षिकधूपेन दृश्यते तद्यथा पुरा ॥
कर्पूरजलकौ भेकतैलं पाटलिमूलयुक् ॥ ४८ ॥
पिष्ट्वा लिप्य पदे द्वे च चरेदङ्गारके नरः ॥
तृणोत्थानादिकं व्यूह्य दर्शयन्वै कुतूहलम् ॥ ४९ ॥

अर्थ— फिर उसी घीमें सहत मिलाकर धूप करनेसे जैसे प्रथम रहा है वैसाही पुनः देख पड़ै. कपूर, सुगंधवा-

ठामें मेंडकका तेल, पाड़रीकी जड़ इनको पीसकर दोनों पावोंमे लगाकर मनुष्य इधर उधर पड़ेहुये तृणको एकत्र कर आश्चर्यको देखावते अंगारोंमें चलै तौ जलै नहीं ॥४८॥४९॥

विषग्रहरुजध्वंसक्षुद्रनर्म च कामिकम् ॥
तत्ते षट्कर्मकं प्रोक्तं सिद्धिद्वयसमाश्रयम् ॥ ५० ॥

अर्थ— विष, ग्रह, रुजाध्वंस, क्षुद्र, नर्म, कामिक ए छह कर्म कहेगये ये ऐहलौकिक पारलौकिक सिद्धिके आश्रय हैं ५०

मन्त्रध्यानौषधिकथामुद्रेज्यायन्त्रमुष्टयः ॥
चतुर्वर्गफलं प्रोक्तं यः पठेत्स दिवं व्रजेत् ॥ ५१ ॥

अर्थ— मंत्र, ध्यान, औषधिकथा, मुद्रा, इज्या, यंत्र, मुष्टि, इनकरके पूर्वोक्त विषादिकोंका नाश होताहै. ये मंत्रादिक चतुर्वर्गफलदायक हैं और पाठ करनेवाला स्वर्गको जाता है ॥ ५१ ॥

इत्याग्नेये महापुराणे औषधानि नाम त्र्यशीत्यधिकद्विशततमोऽध्यायः ॥ २८३ ॥

अथ चतुरशीत्यधिकद्विशततमोऽध्याये मन्त्ररूपौषधकथनम् ॥

धन्वन्तरिरुवाच ॥

आयुरारोग्यकर्तार ॐकराद्याश्च नाकदाः ॥
ॐकारः परमो मन्त्रस्तं जप्त्वा चामरो भवेत् ॥१॥

अर्थ—ओंकारादिक मंत्र आयु आरोग्यकारक और स्वर्गके देनेवाले हैं. "ओंकार" यह परम मंत्र है, तिसकी जप करके पुरुष अमर हो जाताहै ॥ १ ॥

गायत्री परमो मन्त्रस्तं जप्त्वा भुक्तिमुक्तिभाक् ॥
ॐनमोनारायणाय मन्त्रः सर्वार्थदायकः॥ २ ॥

अर्थ—गायत्री परममंत्र है, जिसका जप करनेसे पुरुष भुक्ति और मुक्तिका भागी होताहै. "ओंनमो नारायणाय" यह मंत्र जप करनेसे संपूर्ण अर्थोंके देनेवाला है ॥ २ ॥

"ॐनमो भगवते वासुदेवाय" सर्वदा ॥
"ॐ ह्रूं नमो विष्णवे" मंत्रोऽयं चौषधं परम् ॥३॥

अर्थ—"ओंनमो भगवते वासुदेवाय" यह मंत्र सर्वार्थोंको देताहै. "ओं ह्रूं नमो विष्णवे" यह मंत्र परम औषध है ॥ ३ ॥

अनेन देवा ह्यसुराः सश्रियो निरुजोऽभवन् ॥
भूतानामुपकारश्च तथा धर्मो महौषधम् ॥ ४ ॥

अर्थ—"ओं ह्रूं नमो विष्णवे" इस मंत्रका जप करनेसे देवता दैत्य सब नीरोग और श्रीयुक्त होते भये. और प्राणियोंका उपकार तथा धर्म करना यह महा औषधरूप है ॥ ४ ॥

धर्मः सद्धर्मकृद् धर्मी एतैर्धर्मैश्च निर्मलः ॥
श्रीदः श्रीशः श्रीनिवासः श्रीधरः श्रीनिकेतनः॥५॥
श्रियःपतिः श्रीपरमः एतैः श्रियमवाप्नुयात् ॥

अर्थ—"धर्मः सद्धर्मकृद् धर्मी" इन नामोंके जपनेसे पुरुष निर्मल होजाता है ॥ "श्रीदः" इत्यादि नाममंत्रोंके जपनेसे पुरुषको लक्ष्मी प्राप्त होती है ॥ ५ ॥

कामी कामप्रदः कामः कामपालस्तथा हरिः ॥६॥
आनन्दो माधवश्चैव नाम कामाय वै हरेः ॥

अर्थ—"कामी" इत्यादि नाममंत्रोंके जपनेसे पुरुषकी कामना पूरी होती है ॥ ६ ॥

रामः परशुरामश्च नृसिंहो विष्णुरेव च ॥ ७ ॥
त्रिविक्रमश्च नामानि जप्तव्यानि जिगीषुभिः ॥

अर्थ—"राम" इत्यादि नाममंत्रोंके जपनेसे विजय होतीहै ॥ ७ ॥

विद्यामभ्यस्यतान्नित्यं जप्तव्यः पुरुषोत्तमः ॥ ८ ॥

अर्थ— विद्याके अभ्यास करनेवाले पुरुषोंकरके पुरुषोत्तम सदा जप करनेयोग्य है ॥ ८ ॥

दामोदरो बन्धहरः पुष्कराक्षोऽक्षिरोगनुत् ॥
हृषीकेशो भयहरो जपेदौषधकर्मणि ॥ ९ ॥

अर्थ—"दामोदर" यह मंत्र बंधनाशक है. "पुष्कराक्ष" यह मंत्र नेत्ररोगनाशक है. "हृषीकेश" यह मंत्र भयनाशकहै. औषधकर्ममें जपना चाहिये ॥ ९ ॥

अच्युतं चामृतं मन्त्रं सङ्ग्रामे चापराजितः ॥
जलतारे नारसिंहं पूर्वादौ क्षेमकामवान् ॥ १० ॥

अर्थ— "अच्युत" यह मंत्र अमृत है. संग्राममें जपनेसे कभी पराजय नहीं होतीहै. जल उतरनेके समय नारसिंहको जपै और पूर्व्वादिक दिशाओंमे जो आगे कहे मंत्र हैं तिनको पुरुष क्षेमकामना चाहै तौ जपै ॥ १० ॥

चक्रिणं गदिनं चैव शार्ङ्गिणं खड्गिनं स्मरेत् ॥
नारायणं सर्वकाले नृसिंहोऽखिलभीतिनुत् ॥ ११ ॥

अर्थ— चक्रधर, गदाधर, शार्ङ्गधर, खड्गधर नारायणको सब कालमें जपै. और नृसिंह, अखिल भयके दूर कर देनेवाले हैं ॥ ११ ॥

गरुडध्वजश्च विषहृद्वासुदेवं सदा जपेत् ॥
धान्यादिस्थापने स्वप्ने अनन्ताच्युतमीरयेत्॥१२॥

अर्थ—"गरुडध्वज" यह नाम विषनाशक है, "वासुदेव" इस नामको सदा जपै. धान्यादिके स्थापन करनेमें "अनन्त" इस नामको जपै, स्वप्नके देखनेमे "अच्युत" इस नामको जपै ॥ १२ ॥

नारायणं च दुःस्वप्ने दाहादौ जलशायिनम् ॥
हयग्रीवं च विद्यार्थी जगत्सूतिं सुताप्तये ॥ १३ ॥

अर्थ—दुःस्वप्नके देखनेमें "नारायण" इस नामको जपै. अग्निदाह इत्यादिकोंमें "जलशायी" इस नामको जपै. और विद्याके वास्ते "हयग्रीव" इस नामको जपै, पुत्रके वास्ते "जगत्सूति" इस नामको जपै ॥ १३ ॥

बलभद्रं शौरकार्य्ये एवं नामार्थसाधकम् ॥ १४ ॥

अर्थ— शूरताके कार्य्यमें "बलभद्र" इस नामको जपै, कैसा है यह नाम कि अपने नामके अर्थका साधक है. अर्थात् बल करताहै ॥ १४ ॥

इत्याग्नेये महापुराणे विष्णुनाममन्त्रा नाम चतुरशीत्यधिकद्विशततमोऽध्यायः ॥ २८४ ॥

अथ पञ्चाशीत्यधिकद्विशततमोऽध्यायः ॥

मृतसञ्जीवनीकरसिद्धयोगाः ॥

धन्वन्तरिरुवाच ॥

सिद्धयोगान्पुनर्वक्ष्ये मृतसञ्जीवनीकरान् ॥
आत्रेयभाषितान्दिव्यान्सर्वव्याधिविमर्दनान् ॥१॥

अर्थ— धन्वन्तरि महाराज बोले कि पुनः हम सिद्धयोग कहते हैं.कैसे हैं कि–मृतसंजीवनीकर और दत्तात्रेयभाषित हैं, दिव्य है, संपूर्ण व्याधियोंके नाशक हैं ॥ १ ॥

॥ आत्रेयउवाच ॥

बिल्वादिपञ्चमूलस्य क्वाथः स्याद्वातिके ज्वरे ॥
पावनं पिप्पलीमूलं गुडूची विश्वजोऽथवा ॥ २ ॥

अर्थ— बेल,अँगेथु, सवना, खंभारि, पाड़री इनकी जडका क्वाथ बनाकर पीवै तौ वातज्वर नष्ट होताहै. अथवा चीतकी जड़, पिपरामूरि, गुरिच, सोंठ इनका काथ बनाकर पीवै ॥ २ ॥

आमलक्यभया कृष्णा वन्हिः सर्वज्वरान्तकः ॥
बिल्वाग्निमन्थस्योनाककाश्मर्य्यः पाटला स्थिरा ३

अर्थ— आँवरा,हड़की छाल, पिपरी, चीतकी जड़ इनका काथ बनाकर पीवै तौ संपूर्ण ज्वर नष्ट होतेहैं. बेल, अँगेथु, सवना, खंभारि, पाड़री, जवास इनकी जड़ ॥ ३ ॥

त्रिकण्टकं पृश्णिपर्णी बृहती कण्टकारिका ॥
ज्वराविपाकपार्श्वार्तिकासनुत्कुशमूलकम् ॥ ४ ॥

अर्थ–गोखुरू,पिथवन,छोटी कटैया,वड़ी कटैयाकी जड़ इनका क्वाथ बनाकर पीवै तौ ज्वर,अविपाक,पार्श्वार्ति, कास इनको नष्ट करताहै. इसी तरह कुशकी जड़के क्वाथके पीनेसे ज्वरादिक नष्ट होते हैं. ॥ ४ ॥

गुडूची पर्प्पटी मुस्तं किरातं विश्वभेषजम् ॥
वातपित्तज्वरे देयं पञ्चभद्रमिमं स्मृतम् ॥ ५ ॥

अर्थ— गुरिच, पित्तपापरा, नागरमोथा, चिरायता, सोंठ इस पञ्चभद्रनामक क्वाथके पान करनेसे वातपित्तज्वरका नाश होता है ॥ ५ ॥

त्रिवृद्विशालकटुकात्रिफलारग्वधैः कृतः ॥
संस्कारो भेदनः क्वाथः पेयः सर्वज्वरापहः ॥ ६ ॥

अर्थ— निसोत, इन्द्रोरनिकी जड़,कुटकी, त्रिफला, किरवा इनके क्वाथके पीनेसे सम्पूर्ण ज्वरोंका नाश होताहै और यह क्वाथ भेदन करनेवाला है ॥ ६ ॥

देवदारुबलावासात्रिफलाव्योषपद्मकैः ॥
सविडङ्गैः सितातुल्यं तच्चूर्णं पञ्चकासजित् ॥ ७ ॥

अर्थ— देवदारु, बरियारीकी जड़, रूसकी जड़, त्रिफला, सोंठ, पीपरी, मिरिच, पद्माख, वायविडंग, समभाग चूर्णकर चूर्णकी बराबर चिनी मिलाकर खाय तौ पञ्चप्रकारका कास रोग नष्ट होता है ॥ ७ ॥

दशमूलीशटीरास्नापिप्पलीबिल्वपौष्करैः ॥
शृङ्गीतामलकीभार्ङ्गी-गुडूचीनागवल्लिभिः ॥८॥
यवागूं विधिना सिद्धां कषायम्वा पिबेन्नरः ॥
कासहृद्ग्रहणीपार्श्वहिक्काश्वासप्रशान्तये ॥ ९ ॥

अर्थ— दशमूल, कचूर, रासनकी पाती,पिपरी, बेलकी गूदी, पुहकरमूरि, ककरासिंगी, भुँइअंवरी, भारंगी, गुरिच, पान ॥ ८ ॥ इनकरके सिद्ध यवागू अथवा क्वाथ पान करै तौ कास, हृद्रोग, ग्रहणी, पार्श्वपीड़ा, हिक्का, श्वास इनकी शांति होतीहै ॥ ९ ॥

मधुकं मधुना युक्तं पिप्पलीं शर्करान्विताम् ॥
नागरं गुडसंयुक्तं हिक्काघ्नं लवणत्रयम् ॥ १० ॥

अर्थ— जेठीमधु, शहत अथवा पिपरी चिनी अथवा सोंठ, गुड अथवा सेंधव, सोचर, साँभरि इनके खानेसे हिक्काका नाश होता है ॥ १० ॥

कारव्यजाजीमरिचं द्राक्षा वृक्षाम्लदाडिमम् ॥
सौवर्चलं गुडं क्षौद्रं सर्वारोचननाशनम् ॥ ११ ॥

अर्थ— काला जीरा, करायलु, दाख, अमिलबेत, अनारकी छकली, सोचर, सहत यह चूर्ण सम्पूर्ण अरोचकको नाश करताहै ॥ ११ ॥

शृङ्गबेररसं चैव मधुना सह पाययेत् ॥
अरुचिश्वासकासघ्नं प्रतिश्यायकफान्तकम् ॥१२॥

अर्थ— आदका रस सहत मिलाकर खाय तौ अरुचि, श्वास, कास, प्रतिश्याय, कफ इनको नष्ट करता है ॥१२॥

वटं शृङ्गी शिलालोध्रदाडिमं मधुकं मधु ॥
पिबेत्तण्डुलतोयेन छर्दितृष्णानिवारणम् ॥ १३ ॥

अर्थ— बरगदकी छाली, ककरासिंगी, शुद्ध मैनशिल, लोध पठानी, अनारकी छकली, जेठी मधु, शहत, इनका चूण खाकर चावलोंका धोवना पान करै तौ छर्दि, तृष्णा इनको निवारण होता है ॥ १३ ॥

गुडूची वासकं लोध्रं पिप्पलीक्षौद्रसंयुतम् ॥
कफान्वितं जयेद्रक्तं तृष्णाकासज्वरापहम् ॥ १४ ॥

अर्थ— गुरिच, रूसकी जड़, पठानीलोध, पिपरी इनका चूर्ण शहत मिलाकर खाय तौ कफयुक्त रक्त, तृष्णा, कासज्वर इनको नष्ट करताहै ॥ १४ ॥

वासकस्य रसस्तद्वत्समधुस्ताम्रजो रजः ॥
शिरीषपुष्पस्वरसभावितं मरिचं हितम् ॥ १५ ॥

अर्थ— रूसके पत्तोंका रस,शहत, तांबेकी भस्म अथवा सेरसाके फूलोंके रसकरके भावित मिरिचके चूर्णके खानेसे कफादिकोंका नाश होताहै ॥ १५ ॥

सर्वार्तिनुन्मसूरोऽथ पित्तनुत्तण्डुलीयकम् ॥
निर्गुण्डी शारिवा शेलुरङ्कोलश्च विषापहः ॥१६॥

अर्थ— मसुरी संपूर्ण पीडानाशक है, चमराईका शाक पित्तनाशक है, म्योड़ी, कारी सांव,लसोहरा, अँकोहर इनकी छाल ये विषनाशक हैं ॥ १६ ॥

महौषधाऽमृताक्षुद्रापुष्करग्रन्थिकोद्भवम् ॥
पिबेत्कणायुतं क्वाथं मूर्च्छायां च मदेषु च ॥ १७ ॥

अर्थ— सोंठ, गुरिच, वड़ी कटैयाकी जड़, पुहकरमूल, पिपरामूल, पिपरी इनका काढ़ा बनाकर पीनेसे मूर्च्छा और मद नष्ट होता है ॥ १७ ॥

हिङ्गुसौवर्चलव्योषैर्द्विपलांशैर्घृताढकम् ॥
चतुर्गुणे गवां मूत्रे सिद्धमुन्मादनाशनम् ॥ १८ ॥

अर्थ— हींग, सोचर, सोंठ, पीपल, मिरिच ए सब पौने तीन तीन तोले, गाईका घृत नम्बरी २ सेर एक पाव चौगुने गोमूत्रमें पचाकर सिद्ध करै पश्चात् भक्षण करै तौ उन्माद नष्ट होता है ॥ १८ ॥

शङ्खपुष्पीवचाकुष्ठैः सिद्धं ब्राह्मीरसैर्युतम् ॥
पुराणं हन्त्यपस्मारं सोन्मादं मेध्यमुत्तमम् ॥ १९ ॥

अर्थ-- कौड़ेलाका पंचांग, बच, पुहकरमूर, ब्राह्मी-का रस इनसे सिद्ध किये हुये घृतके खानेसे पुराना अपस्मार उन्माद इनको नष्ट करता है और मेध्य है॥१९॥

पञ्चगव्यं घृतं तद्वत्कुष्ठनुच्चाभयायुतम् ॥
पटोलत्रिफलानिम्बगुडूचीधावनीवृषैः ॥ २० ॥
सकरञ्जैर्घृतं सिद्धं कुष्ठनुद्वज्रकं स्मृतम् ॥

अर्थ— हड़के चूर्णसे युक्त पंचगव्यनामक घृत कुष्ठको दूर करताहै. परवरके पत्ता, त्रिफला, नीमको छाल, गुरिच, बड़ी कटैयाकी जड़, रूसकी जड़, ॥ २० ॥ कंजकी गूदी, इनसे सिद्ध घृत वज्रनामक कुष्ठको नष्ट करताहै ॥

निम्बं पटोलं व्याघ्रीं च गुडूचीं वासकन्तथा २१॥

अर्थ—नींबकी छाल, परवरके पत्ता, छोटी कटैयाकी जड़, गुरिच, रूसकी जड़ ॥ २१ ॥

कुर्य्याद्दशपलान्भागानेकैकस्य सुकुट्टितान् ॥
जलद्रोणे विपक्तव्यं यावत्पादावशेषितम् ॥ २२ ॥

अर्थ—इन कूटी औषधोंके पृथक् २ नम्बरी डेढ़ २ पाव भाग, इन सब औषधोंको नम्बरी ९ सेर आधपाव जलमें पकावै जब चतुर्थांश शेष रहे ॥ २२ ॥

घृतप्रस्थं पचेत्तेन त्रिफलागर्भसंयुतम् ॥
पञ्चतिक्तमितिख्यातं सर्प्पिः कुष्ठविनाशनम्॥२३॥

अर्थ—उसी काढ़ेमें त्रिफलाका चूर्ण और नम्बरी ९ छटांक घृत पचावै. उस घृतके खानेसे कुष्ठ नष्ट हो जाता है. यह पंचतिक्तनामक घृत है ॥ २३ ॥

अशीतिं वातजान् रोगान् चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ॥
विंशतिं श्लैष्मिकान्कासपीनसाऽर्शोव्रणादिकान् ॥
हन्त्यन्यान् योगराजोऽयं यथार्कस्तिमिरं खलु ॥

अर्थ— अस्सी प्रकारके वातरोग, चालीस प्रकारके पित्तरोग, वीस प्रकारके श्लेष्मरोग, कास, पीनस, अर्श, व्रणादिक इन सबको यह घृत नष्ट करदेताहै ॥ २४ ॥

अर्थ— यह योगराज अन्य रोगोंकोभी जैसे सूर्य्य अंधकारको इसीतरह नष्ट करदेता है ॥

त्रिफलायाः कषायेण भृङ्गराजरसेन च ॥ २५ ॥
व्रणप्रक्षालनं कुर्य्यादुपदंशप्रशान्तये ॥

अर्थ— त्रिफलाके काढ़ासे और भँगिराके रससे ॥ २५ ॥ व्रणका प्रक्षालन करै तो उपदंश शांत होजाय ॥

पटोलदलचूर्णेन दाडिमत्वग्रजोऽथवा ॥ २६ ॥
गुण्डयेच्च गजेनाऽपि त्रिफलाचूर्णकेन च ॥

अर्थ— परवरके पत्तोंके चूर्णकरके अथवा अनारकी छकलीके चूर्णकरके अथवा गज(नागवला)के चूर्णकरके अथवा त्रिफलाके चूर्णकरके व्रणका अवगुण्डन करै ॥ २६ ॥

त्रिफलायोरजोयष्टिमार्कवोत्पलमारिचैः ॥ २७ ॥
ससैन्धवैः पचेत्तैलमभ्यङ्गाच्छर्दिनाशनम् ॥

अर्थ--त्रिफलाका चूर्ण, लोहचन, जेठीमधु, भँगिरा, कमलके बीज, मिरिच, ॥ २७ ॥ सेंधव, ये सब दवा डालकर तैल पचाकर लगावै तौ छर्दिका नाश होताहै ॥

सक्षीरान्मार्कवरसान् द्विप्रस्थमधुकोत्पलैः ॥ २८ ॥
पचेत्तु तैलकुडवं तन्नस्यं पलितापहम् ॥

अर्थ— दूध, भंगिराका रस, नम्बरी १ सेर आधपाव जेठीमधु, इतनेही कमलके बीज सबको नम्बरी आधपाव सोलामासे तेलमें पचवै. उसीकी नस्य देय तौ पलित रोगका नाश होताहै ॥ २८ ॥

निम्बं पटोलं त्रिफला गुडूची खदिरं वृषम् ॥२९॥
भूनिम्बपाठात्रिफलागुडूचीरक्तचन्दनम् ॥
योगद्वयं ज्वरं हन्ति कुष्ठविस्फोटकादिकम् ॥३०॥

अर्थ—नींबकी छाल, परवरके पत्ता, त्रिफला, गुरिच, खैरकी लकड़ी, रूसकी जड़ ॥ २९ ॥ इनका काढ़ा अथवा चिरायता, पाठाकी जड़, त्रिफला, गुरिच, लालचंदन इनका काढ़ा ये दोनों योग ज्वरको और कुष्ठ विस्फोटकादिक इनको नष्ट करदेते हैं ॥ ३० ॥

पटोलामृतभूनिम्बवासारिष्टकपर्प्पटैः ॥
खदिरान्तयुतैः क्वाथो विस्फोटज्वरशान्तिकृत् ३१

अर्थ— परवरके पत्ता, गुरिच, चिरायता, रुसकी जड़, नींबकी छालो, पित्तपापरा, खैरकी लकड़ी इनका क्वाथ पीनेसे विस्फोट व ज्वर, इनका शांत करदेता है ॥ ३१ ॥

दशमूली छिन्नरुहा पथ्या दारु पुनर्नवा ॥
ज्वरविद्रधिशोथेषु शिग्रुविश्वजिता हिताः ॥ ३२ ॥

अर्थ— दशमूल, गुरिच, हड़की छाल, देवदारु, गदापुन्नाकी जड़, सहिंजनकी छाल, सोंठ, जिता प्रसिद्ध इनका काढ़ा ज्वर, विद्रधि, शोथ इनमे हित है ॥ ३२ ॥

मधूकं निम्बपत्राणि लेपः स्याद्व्रणशोधनः ॥

अर्थ—जेठीमधु,नींबके पत्ता इनका लेप व्रणशोधक है॥

त्रिफला खदिरो दार्वी न्यग्रोधातिबलाकुशाः ३३
निम्बमूलकपत्राणां कषायाः शोधने हिताः ॥

अर्थ— त्रिफलाकी बकली, खैरकी लकड़ी, दारुहल्दी, बरगदकी छाल,ककईकी जड़,कुशकी जड़, नींब और मूरीके पत्ता इनके काढा व्रणके शोधनमे हित हैं ॥ ३३ ॥

करिञ्जारिष्टनिर्गुण्डीरसो हन्याद्व्रणकृमीन् ॥ ३४ ॥

अर्थ— कंजकी गूदी, नींबकी छाल, सम्हालू इनका रस व्रणके कीड़ोंको नष्ट करताहै ॥ ३४ ॥

धातकीचन्दनबलासमङ्गामधुकोत्पलैः ॥
दार्वीमेदान्वितैर्लेपः ससर्पिर्व्रणरोपणः ॥ ३५ ॥

अर्थ— धवके फूल, चंदन लाल, बरियारीकी जड़, मंजीठ, जेठीमधु, कमलके वीज, दारुहल्दी इनका चूर्ण घृत मिलाकर लेप करनेसे व्रण पूरित होजाता है ॥ ३५ ॥

गुग्गुलुत्रिफलाव्योषसमांशैर्घृतयोगतः ॥
नाडीदुष्टव्रणं शूलं भगन्दरमुखं हरेत् ॥ ३६ ॥

अर्थ— गूगुरु, त्रिफला, सोंठ, पीपल, मिरिच, इन सबका समांश चूर्ण घृतमें मिलाकर लेप करनेसे नाड़ीव्रण, दुष्टव्रण, शूल, भगन्दरमुख इनको नष्ट करदेता है ॥ ३६ ॥

हरीतकीं मूत्रसिद्धां सतैललवणान्विताम् ॥
प्रातः प्रातश्च सेवेत कफवातामयापहाम् ॥ ३७ ॥

अर्थ— गोमूत्रमें सिद्ध कीहुई हड़को सेंधव और तेल मिलाकर प्रातः खाय तौ कफवातके रोगोंको नष्ट करतीहै ३७

त्रिकटुत्रिफलाक्काथं सक्षारलवणं पिबेत् ॥
कफवातात्मकेष्वेव विरेकः कफवृद्धिनुत् ॥ ३८ ॥

अर्थ— सोंठ, पीपल, मिरिच, अँवरा, हड़, बहेड़ाकी छाल, इनके काढ़ामें सज्जीखार, लवणका चूर्ण मिलाकर खाय तौ कफ और वातके रोगोंमें विरेचन होता है. और कफकी वृद्धिको नष्ट करताहै ॥ ३८ ॥

पिप्पलीपिप्पलीमूलवचाचित्रकनागरैः ॥
क्काथितं वा पिबेत्पेयमामवातविनाशनम् ॥ ३९ ॥

अर्थ— पिपली, पिपरामूर, बच, चीतकी जड़, सोंठ इनका काढ़ा बनाकर अथवा पेया बनाकर खाय तौ आमवातको नष्ट करदेता है ॥ ३९ ॥

रास्नां गुडूचीमेरण्डदेवदारुमहौषधम् ॥
पिबेत्सर्वाङ्गिके वाते सामे सन्ध्यस्थिमज्जगे ॥४०॥

अर्थ— रासनि, गुरिच, रेणकी जड़, देवदारु, सोंठ इनका काढ़ा बनाकर सर्व्वांगगत वायु, आमवात, संधिगत, अस्थिगत, मज्जागत वायुमें पियै ॥ ४० ॥

दशमूलकषायं वा पिबेद्वा नागराम्भसा ॥
अर्थ— अथवा सोंठके जलसे दशमूलका काढ़ा पियै ॥

शुण्ठी गोक्षुरकक्काथः प्रातः प्रातर्न्निषेवितः ॥४१॥
सामवातकटीशूलनाशनो रुक्प्रणाशनः ॥

अर्थ— सोंठ, गोखुरू इनका काढ़ा रोज प्रातःकाल पीनेसे आमवातसहित कटिशूल और अन्य रोगोंकोभी नष्ट करताहै ॥ ४१ ॥

समूलपत्रशाखायाः प्रसारिण्याश्च तैलकम् ॥४२॥

अर्थ— जड़, पत्ते शाखासहित गंधप्रसारनिके तेलके लगानेसे पूर्व्वोक्त रोगोंका नाश होताहै ॥ ४२ ॥

गुडूच्याः स्वरसं कल्कं चूर्णं वा क्काथमेव च ॥
प्रभूतकालमासेव्य मुच्यते वातशोणितात् ॥४३॥

अर्थ— गुरिचका स्वरस अथवा कल्क अथवा चूर्ण अथवा क्काथ इसको बहुत रोज सेवन करै तौ वातरक्त नष्ट होजाता है ॥ ४३ ॥

पिप्पलीवर्द्धमानं वा सेव्यं पथ्या गुडेन वा ॥

अर्थ— पिपरी, रेणको जड़ अथवा हड़की छाल, गुड इनके सेवनसे पूर्व्वोक्त रोग नष्ट होताहै ॥

पटोलत्रिफलातीव्राकटुकामृतसाधितम् ॥ ४४ ॥
पक्कं पीत्वा जयत्याशु स दाहं वातशोणितम् ॥

अर्थ— परवरके पत्ता, आँवरा, हड़, बहेड़ाको छाल, मालकांगनी, कुटकी, गुरिच इनका ॥४४ ॥ काढ़ा बनाकर पियै तौ वातशोणित नष्ट होताहै ॥

गुग्गुलुं कोष्णशीतेन गुडूचीत्रिफलाम्भसा ॥४५॥

अर्थ— शुद्ध गूगुरको गुरिच और आँवरा, हड़,बहेडा-के जलको उष्ण करै पश्चात् शीत कर उसीसे खाय ॥४५॥

बलापुनर्नवैरण्डबृहतीद्वयगोक्षुरैः ॥
सहिङ्गुलवणैः पीतं सद्यो वातरुजापहम् ॥ ४६ ॥

अर्थ— अथवा बरियारी, गदापुन्ना, रेण, छोटी कटैया, बड़ी कटैया, गोखुर इनकी जड़ हींग, सेंधव इनका चूर्ण मिलाकर खाय तौ जल्दी वातरोगको नष्ट करता है४६

कार्षिकं पिप्पलीमूलं पञ्चैव लवणानि च ॥
पिप्पली चित्रकं शुण्ठी त्रिफला त्रिवृता वचा४७॥

अर्थ— शाखोंकी छाल, पिपरामूर, सेंधव, सोचर, सांभरि, पांगा, गोड़ारी, पिपरी, चीतको जड़ सोंठ, अँवरा, हड़, बहेड़ाकी छाल, निसोथ, वच, ॥ ४७ ॥

द्वौ क्षारौ शातला दन्ती स्वर्णक्षीरी विषाणिका ॥
कोलप्रमाणां गुटिकां पिबेत्सौवीरकायुताम्॥४८॥

अर्थ— सज्जीखार, जवाखार, शातला (सेहुण्डभेद)की छाल, दतूनकी जड़, चोक, ककरासिंगी इनको आठ मासेकी गोली बनाकर कांजी विशेषसे पियै तौ ॥ ४८ ॥

शोथावपाके त्रिवृता प्रवृद्धे चोदरादिके ॥
क्षीरं शोथहरं दारुवर्षाभूनागरैः शुभम् ॥ ४९ ॥

अर्थ— शोथके अवपाकमें और उदरादिकोंकी वृद्धिमें निसोत, गाईका दुग्ध, रक्त गदापुन्ना, देवदारु, सोंठ इनके चूर्णसे युक्त गाईका दुग्ध शोथको हरताहै ॥ ४९ ॥

सेकस्तथार्कवर्षाभूनिम्बक्वाथेन शोथजित् ॥

अर्थ— तिसीप्रकार मदार, रक्तपुनर्नवा इनकी जड़, नींबकी छाल इनके काढ़ेसे शोथको धोनेसे शोथ नष्ट होजाता है ॥

व्योषगर्भं पलाशस्य त्रिगुणे भस्मवारिणि ॥५०॥
साधितं पिबतः सर्प्पिः पतत्यर्शो न संशयः ॥

अर्थ— सोंठ, पीपर, मिरिच इनके चूर्णसे युक्त छिउलकी छालका भस्म तिसमें जल मिलावै ॥ ५० ॥ उसीमें घृत पचाकर खाय तौ अर्शरोग नष्ट होताहै ॥

विष्वक्सेनावनिर्गुण्डीसाधितं चाऽपि लावणम्॥५१॥

अर्थ— फूल, प्रियंगु, सह्मालू इनके रससे सिद्ध किया हुवा सेंधव निमक खानेसे अर्शको नष्ट करताहै ॥ ५१ ॥

विडङ्गानलसिन्धूत्थरास्नोग्रक्षारदारुभिः ॥
तैलं चतुर्गुणं सिद्धं कटुद्रव्यजलेन वा ॥ ५२ ॥

अर्थ—वायुविडंग, चीतको जड़, सेंधव, रासनि, बच, जवाखार, देवदारु इनके कल्कमें चौगुना तेल सिद्ध करै अथवा कुटकी, सुगंधवाला इनके कल्कमें सिद्ध करै॥५२॥

गण्डमालापहं तैलमभ्यङ्गाद्गलगण्डनुत् ॥

अर्थ— यह तैल लगानेसे गण्डमाला, गलगण्ड इनको नष्ट करताहै ॥

शटी पुंनागलवयक्काथः क्षौद्रेण संयुतः ॥ ५३ ॥
पयस्या पिप्पली वासाकल्कं सिद्धं क्षये हितम् ॥

अर्थ— कचूर, नागकेसरि, भारंगी इनका काढ़ा शहत मिलाकर खाय ॥५३॥ अथवा पयस्या (क्षीरकाकोली), पिपरी, रूसको जड़ इनका सिद्ध कल्क खाय तौ क्षयरोगमें हित होताहै ॥

वचाविडभयाशुण्ठीहिङ्गुकुष्ठाग्निदीप्यकान् ॥५४॥

द्वित्रिषट्चतुरेकांशसप्तपञ्चाशिकाः क्रमात् ॥
चूर्णं पीतं हन्ति गुल्ममुदरं शूलकासनुत् ॥ ५५ ॥

अर्थ— वच २ भाग, सांभरि, हड़की छाल ३ भाग, सोंठ ६ भाग, हींग ४ भाग, कूट १ भाग, चीतकी जड़ ७ भाग, अजमोदा ५ भाग इनका चूर्ण पान करनेसे गुल्म, उदररोग, शूल, कास इनको नष्ट करता है ॥ ५४ ॥ ५५ ॥

पाठानिकुम्भत्रिकटुत्रिफलाग्निषु साधितम् ॥
मूत्रेण चूर्णगुटिका गुल्मप्लीहादिमर्दिनी ॥ ५६ ॥

अर्थ— पाढ़ीकी जड़, दतूनकी जड़, सोंठ, पीपर, मिरिच, आँवरा, हड़की छाल, बहेराकी छाल इनके चूर्णकी गोमूत्रमें गोली बनाय खाय तौ गुल्म, प्लीहा इत्यादिको नष्ट करतीहै ॥ ५६ ॥

वासानिम्बपटोलानि त्रिफलावातपित्तनुत् ॥
लिह्यात्क्षौद्रेण वैडङ्गं चूर्णं कृमिविनाशनम् ॥५७॥

अर्थ— रूसकी जड़, नींवकी छाल, परवरके पत्ता, त्रिफला इनका चूर्ण शहतसे खाय तौ वातपित्तनाशक है। बायबिडंगका चूर्ण शहत मिलाकर खाय तौ कृमिरोग नष्ट होताहै ॥ ५७ ॥

विडङ्गसैन्धवक्षारमूत्रेणापि हरीतकी ॥

अर्थ— बायबिडंग, सेंधव, जवाखार इनके चूर्णसे युक्त हड़का चूर्ण खाय और गोमूत्रसे उतार देवे तौ कीड़ोंका नाश होताहै ॥

शल्लकीबदरीजम्बुप्रियालाम्रार्जुनत्वचः ॥ ५८ ॥
पीताः क्षीरेण मध्वक्ताः पृथक्शोणितवारणाः ॥

अर्थ— पाढ़की जड़, बेर, जमुनी, चिरौंजी, आँब, अर्जुन-हर्रा इनकी छाल अलग२ शहत मिलाकर खाय पश्चात् दुग्धपान करै तौ रक्तका नाश होताहै ॥ ५८ ॥

बिल्वाम्रधातकीपाठाशुण्ठीमोचरसाः समाः ॥५९॥
पीता रुन्धत्यतीसारं गुडतक्रेण दुर्जयम् ॥

अर्थ— बेलकी गूदी, आँबकी छाल, धवके फूल, सोंठ, मोचरस ये समभाग चूर्ण कर॥५९॥गुड और माठा मिलाकर इसको पान करै तौ कठिन अतीसारको नष्ट करताहै॥

चाङ्गेरीकोलदध्यम्बुनागरक्षारसंयुतम् ॥ ६० ॥
घृतयुक्क्वाथितं पेयं गुदभ्रंशे रुजापहम् ॥

अर्थ— अमलोनियां, वैरकी गूदी, कैथाकी गूदी, सुगंधवाला, सोंठ, जवाखार इनका काढ़ा बनाकर घी डाल पान करै तौ गुदभ्रंशकी पीड़ाका नाश करै ॥ ६० ॥

विडङ्गाऽतिविषामुस्तं दारुपाठाकलिङ्गकम् ॥६१॥
मरिचेन समायुक्तं शोथातीसारनाशनम् ॥

अर्थ— वायविडंग, अतीस, नागरमोथा, देवदारु, पाढ़की जड़, इन्द्रजव, मिरिच इनका काढ़ा बनाकर पियै तौ शोथातीसार नष्ट होताहै ॥ ६१ ॥

शर्करासिन्धुशुण्ठीभिः कृष्णा मधुगुडेन वा ॥६२॥
द्वे द्वे खादेद्धरीतक्यौ जीवेद्वर्षशतं सुखी ॥

अर्थ— चिनी, सेंधव, सोंठ, इनके चूर्णसे युक्त अथवा पिपरी, सहत, गुड़ इनसे युक्त दो २ हरड़े खाय तौ सुखपूर्व्वक मनुष्य सौ वर्ष जीवता है ॥ ६२ ॥

त्रिफला पिप्पलीयुक्ता समध्वाज्या तथैव सा ६३॥

अर्थ— त्रिफला, पिपरी इनसे युक्त अथवा शहत, घृत मिलाकर हरड़े खाय तौ पूर्व्वोक्त फल होताहै ॥ ६३ ॥

चूर्णमामलकं तेन स्वरसेन तु भावितम् ॥
मध्वाज्यशर्करायुक्तं लीढ्वा स्त्रीशः पयः पिबेत् ६४॥

अर्थ— अँवराका चूर्ण उसीके रससे भावित कर शहत, घृत, चिनी मिलाकर बहुत स्त्रियोंवाला पुरुष खाय पश्चात् दुग्धपान करै ॥ ६४ ॥

माषपिप्पलिशालीनां यवगोधूमयोस्तथा ॥
चूर्णभागैः समांशैश्च पचेत्पिप्पलिकां शुभाम्॥६५॥

अर्थ— उरिद, पिपरी, चावल, जव, गेहूं इनका समभाग चूर्ण कर और चूर्णसहित पिपरीको पचवै॥ ६५ ॥

तां भक्षयित्वा च पिबेच्छर्करामधुरं पयः ॥
नरश्चटकवज्जम्भेद्दशवारान्स्त्रियं ध्रुवम् ॥ ६६ ॥

अर्थ— उस पिपरीको खाकर चिनी मिलाय दुग्धपान करै तौ मनुष्य स्त्रीको दशवार गरगवा पक्षीकी तरह भोग करताहै ॥ ६६ ॥

समङ्गाधातकीपुष्प-लोध्रनीलोत्पलानि च ॥
एतत्क्षीरेण दातव्यं स्त्रीणां प्रदरनाशनम् ॥ ६७ ॥

अर्थ—मँजीठ, धवके फूल, पठानी लोध, कमलके बीज इनका चूर्ण दूधमें मिलाकर पिलावै तौ स्त्रियोंका प्रदर नष्ट होजाता है ॥ ६७ ॥

बीजं कौरन्टकं चापि मधुकं श्वेतचन्दनम् ॥
पद्मोत्पलस्य बीजानि मधुकं शर्करा तिलान्॥६८॥
द्रवमाणेषु गर्भेषु गर्भस्थापनमुत्तमम् ॥

अर्थ—इन्द्रजव, जेठीमधु, चंदन, सपेद भारंगी, कमलके बीज, मुरेठी, चिनी, तिल इनका चूर्ण द्रवमाण गर्भमें खाया जाय तौ गर्भको स्थापित करता है ॥ ६० ॥

देवदारु नभः कुष्ठं नलदं विश्वभेषजम् ॥ ६९ ॥
लेपः काञ्जिकसम्पिष्टस्तैलयुक्तः शिरोर्तिनुत् ॥

अर्थ—देवदारु, अभ्रककूट, खसखस, सोंठ इनको कांजीमें बाँटकर तेल मिलाके लेप करनेसे शिरकी पीडा नष्ट होती है ॥ ६९ ॥

वस्त्रपूतं क्षिपेत्कोष्णं सिन्धूत्थं कर्णशूलनुत् ॥ ७० ॥

अर्थ—सेंधव निमक कपरछान कर उसको गरम कर कानमें छोड़नेसे कर्णशूल नष्ट होजाता है ॥ ७० ॥

लसुनार्द्रकशिग्रूणां कदल्या वा रसं पृथक् ॥
बलाशतावरीरास्नामृताः सैरेयकैः पिबेत् ॥ ७१ ॥

अर्थ—लहसुन, अदरख, सहिंजनकी छाल, केला इनका रस पृथक् २ बरियारीकी जड़, छतावरि, रासनि, हड़की छाल, कंसरैयाकी पत्ती इनके चूर्णसे युक्त पान करै ॥ ७१ ॥

त्रिफलासहितं सर्पिस्तिमिरघ्नमनुत्तमम् ॥

अर्थ—त्रिफलायुक्त घृत खानेसे तिमिरका नाश होताहै ॥

त्रिफलाव्योषसिन्धूत्थैर्घृतं सिद्धं पिबेन्नरः ॥७२ ॥
चाक्षुष्यं भेदनं हृद्यं दीपनं कफरोगनुत् ॥

अर्थ—त्रिफला, सोंठ, पीपर, मिरिच, सेंधव इनसे सिद्ध घृतको पान करै तौ यह चाक्षुष्य, भेदन, हृद्य, दीपन, कफरोगनाशक है ॥ ७२ ॥

नीलोत्पलस्य किञ्जल्कं गोशकृद्रससंयुतम् ॥७३॥
गुटिकाञ्जनमेतत्स्याद्दिनरात्र्यन्धयोर्हितम् ॥

अर्थ—काले कमलके फूलके केसर, गाईके गोबरके रसमें पीसकर गोली बनाय॥७३॥ घिसकर आँखमें लगानेसे दिनौंधी और रतौंधी अच्छी होजाती है ॥

यष्टीमधुवचाकृष्णा-बीजानां कुटजस्य च ॥७४॥
कल्केनालोड्य निम्बस्य कषायो वमनाय सः ॥

अर्थ— जेठीमधु, बच, पिपरी, इन्द्रयव इनका कल्क बनाय नींबकी छालके काढ़ामें मिलाकर पीनेसे वमन होताहै ॥ ७४ ॥

स्निग्धस्विन्नयवं तोयं प्रदातव्यं विरेचनम् ॥७५॥
अन्यथा योजितं कुर्यान्मन्दाग्निं गौरवारुचिम् ॥

अर्थ—उत्तम जव कूटकर काढ़ा बनाय गुनगुना पियै तौ विरेचन होता है ॥ ७५ ॥ अन्यथा नाम इसतरह न करनेसे मंदाग्नि,गुरुता,अरुचि इनको करता है ॥

पथ्यासैन्धवकृष्णानां चूर्णमुष्णाम्बुना पिबेत्॥७६॥

विरेकः सर्वरोगघ्नः श्रेष्ठो नाराचसंज्ञकः ॥

अर्थ—हड़की छाल, सेंधव, पिपरी इनका चूर्ण गरम जलसे पिये ॥ ७६ ॥ तौ सर्व-रोग-नाशक विरेचन होताहै. यह नाराचसंज्ञक है ॥

सिद्धयोगा मुनिभ्यो ये आत्रेयेण प्रदर्शिताः ॥
सर्वरोगहराः सर्वरोगाग्र्याः सुश्रुतेन हि ॥ ७७ ॥

अर्थ—आत्रेय मुनिकरके मुनिनके वास्ते जे सिद्ध योग कहे गयेहैं ते संपूर्ण सर्व रोगनाशक और सर्वयोग श्रेष्ठ हैं. वे सम्पूर्ण सुश्रुतने भी कहा है ॥ ७७ ॥

इत्याग्नेये महापुराणे सिद्धयोगा नाम पञ्चाशीत्यधिकद्विशततमोऽध्यायः ॥ २८५ ॥

अथ षडशीत्यधिकद्विशततमोऽध्यायः ॥

कल्पसागरः ॥ धन्वन्तरिरुवाच ॥

कल्पान्मृत्युंजयान् वक्ष्ये ह्यायुर्दान् रोगमर्दनान् ॥
त्रिशती रोगहा सेव्या मध्वाज्यत्रिफलाऽमृता ॥ १ ॥

अर्थ—मृत्युके नाशक आयुर्वर्द्धक रोगनाशक कल्प कहते हैं—यह धन्वन्तरि महाराज कहते हैं—शहत घृत त्रिफला मिलाय हड़का चूर्ण खानेसे तीनसौ वर्षकी आयु होती है और रोग नष्ट होते हैं ॥ १ ॥

पलं पलार्द्धं कर्षं वा त्रिफलां सकलां तथा ॥
बिल्वतैलस्य नस्यं च मासं पञ्चशती कविः ॥ २ ॥

अर्थ—दो तोले आठमासे अथवा एक तोले चारमासे अथवा आठमासे तिसी प्रकार त्रिफलाके खानेसे

पूर्वोक्त फल होता है. वेलके तेलका १ मास नस्य करनेसे पांच सौ वर्ष जीवन रहता है और कवि होजाता है ॥ २ ॥

रोगापमृत्युवलिजित्तिलं भल्लातकं तथा ॥

अर्थ—तिल और शुद्ध भेलावाके खानेसे रोग, अपमृत्यु, बली इन तीनोंको नष्ट करता है ॥

पञ्चाङ्गं वाकुचीचूर्णं षण्मासं खदिरोदकैः ॥ ३ ॥
क्वाथैः कुष्ठं जयेत्सेव्यं चूर्णं नीलकुरण्टजम् ॥
क्षीरेण मधुना वापि शतायुः खण्डदुग्धभुक् ॥ ४ ॥

अर्थ—बकुचीके पञ्चाङ्गका चूर्ण छामास खैरके काढ़ेसे खाय तौ कुष्ठको नष्ट करता है. और कारी कंसरैयाकी जड़का चूर्ण दुग्धसे अथवा शहतसे खानेसे और चिनी मिलाय दुग्धके पश्चात् खानेसे पुरुष सौ वर्ष जीवता है ॥३॥४॥

मध्वाज्यशुण्ठीं संसेव्य पलं प्रातः स मृत्युजित् ॥
वलीपलितजिज्जीवेन्माण्डूकीचूर्णदुग्धपाः ॥ ५ ॥

अर्थ—शहत घृत मिलाय सोंठका चूर्ण दो तोला आठ मासे खाय तौ मृत्युको जीतता है. माण्डूकीका चूर्ण दुग्धमें मिलाय खाय तौ बली और पलित इनको जीतता है ॥ ५ ॥

उच्चटामधुना कर्षं पयःपा मृत्युजिन्नरः ॥
मध्वाज्यैः पयसा वापि निर्गुण्डी रोगमृत्युजित् ६॥

अर्थ—पथरचटाकी जड़ आठ मासे शहत मिलाकर खाय पश्चात् दुग्ध पियै तौ मृत्युको जीतता है. शहत घृत मिलाकर अथवा दूधके संग सम्हालूका चूर्ण पियै तौ रोग और मृत्युको जीतता है ॥ ६ ॥

पलाशतैलं कर्षैकं षण्मासं मधुना पिबेत ॥

दुग्धभोजी पञ्चशती सहस्रायुर्भवेन्नरः ॥ ७ ॥

अर्थ—छिउलका तेल आठमासे शहत मिलाकर छा महीना पियै और दुग्ध पियै तौ पांचसौ वर्ष अथवा एकहजार वर्ष जीवता है ॥ ७ ॥

ज्योतिष्मतीपत्ररसं पयसा त्रिफलां पिबेत् ॥
मधुनाज्यं ततस्तद्वच्छतावर्य्या रजः पलम् ॥ ८ ॥

अर्थ—मालकांगनीके पत्तोंका रस पियै अथवा दूधसे त्रिफला पियै अथवा शहत घृत पियै अथवा सतावरका चूर्ण दो तोला आठ मासे खाय तौ पूर्वोक्त फल होता है ॥ ८ ॥

क्षौद्राज्यैः पयसा वापि निर्गुण्डी रोगमृत्युजित् ॥

अर्थ—शहत घृतसे अथवा दूधसे सम्हालूका रस पियै तौ रोग और मृत्युको जीतता है ॥

पञ्चाङ्गं निम्बचूर्णस्य खदिरक्काथभावितम् ॥ ९ ॥
कर्षं भृङ्गरसेनापि रोगजिच्चामरो भवेत् ॥

अर्थ—नींबके पंचांगका चूर्ण खैरके काढ़ेसे भावित करै ॥९ ॥ अथवा भँगिराके रससे भावित करके आठ मासे खानेसे रोगको जीतकर अमर होजाता है ॥

रुदन्तिकाज्यमधुभुक् दुग्धभोजी च मृत्युजित्॥१०॥

अर्थ—रुद्रदंतिकाका चूर्ण शहत घृत मिलाकर पियै और दुग्ध पियै तौ मृत्युको जीतता है ॥ १० ॥

कर्षं चूर्णं हरीतक्या भावितं भृङ्गराड्रसैः ॥
घृतेन मधुना सेव्य त्रिशतायुश्च मृत्युजित् ॥ ११ ॥

अर्थ— हड़का चूर्ण भँगिराके रससे भावित करै और आठ मासे चूर्ण शहत घृत मिलाय खाय तौ रोगोंको जीतकर तीनसौ वर्ष जीता है ॥ ११ ॥

वाराहिका भृङ्गरसं लोहचूर्णं शतावरी ॥
साज्यं कर्षं पञ्चशती कार्तचूर्णं शतावरी ॥ १२ ॥
भावितं भृङ्गराजेन मध्वाज्यं त्रिशती भवेत् ॥

अर्थ— वाराहीकन्दका चूर्ण, भंगिराका रस,सतावरी, शुद्ध कीटी, घृत मिलाय आठ मासे इसके खानेसे पांचसौ वर्ष जीवता है तथा समुद्रफल अथवा केसरका चूर्ण, सतावरि ॥ १२ ॥ इनको भँगिराके रससे भावित कर शहत और घृत मिलाय खानेसे तीनसौ वर्ष जीवता है ॥

ताम्रं मृतं मृततुल्यं गन्धकं च कुमारिका ॥ १३ ॥
रसैर्विमृज्य द्वे गुञ्जे साज्यं पञ्चशताब्दवान् ॥

अर्थ— तांबेकी भस्म, माराहुवा गंधक इनको मनुष्य घीकुंवारिके ॥ १३ ॥ रससे घोट कर घृत मिलाय खानेसे पांचसौ वर्ष जीवता है ॥

अश्वगन्धा पलं तैलं साज्यं खण्डं शताब्दवान् १४

अर्थ— असगँधका चूर्ण, सोलामासे तेल, घृत, चिनी इनके खानेसे मनुष्य एकसौ वर्ष जीता है ॥ १४ ॥

पलं पुनर्नवाचूर्णं मध्वाज्यपयसा पिबेत् ॥
अशोकचूर्णस्य पलं मध्वाज्यपयसाऽर्तिनुत् ॥१५॥

अर्थ— गदापुन्नाकी जड़का चूर्ण अथवा अशोकको छालका चूर्ण शहत घृत दूध मिलाय पिये तौ पीडा दूर होजाती है ॥ १५ ॥

तिलस्य तैलं समधु नस्यात्कृष्णकचः शती ॥
कर्षभक्षं समध्वाज्यं शतायुः पयसा पिबन् ॥१६॥

अर्थ— तिलका तेल शहत मिलाकर नस्य लेय तौ काले बार होजाते हैं और सौ वर्ष जीता है. तथा बहेडेका चूर्ण आठ मासे शहत घृत मिलाय खाय और दूध पियै तौ सौ वष जीता है ॥ १६ ॥

अभयं सगुडं जग्ध्वा घृतेन मधुरादिभिः ॥
दुग्धान्नभुक् कृष्णकेशोऽरोगी पञ्चशताब्दवान्१७

अर्थ— हड़का चूर्ण, गुड़ और घृत और मीठे पदार्थ मिलाकर खाय और दूध भात खाय तौ मनुष्यके काले बार रहतेहैं और पांचसौ वर्ष जीताहै. रोगसे निर्मुक्त होताहै १७

पलं कूष्माण्डिकाचूर्णं मध्वाज्यपयसा पिबन् ॥
मासं दुग्धान्नभोजी च सहस्रायुर्विरोगवान् ॥ १८ ॥

अर्थ— दो तोला आठ मासे कुह्मड़ाका चूर्ण कर शहत घृत दुग्ध मिलाकर एक महीना पियै और दूध भात खाय तौ रोगसे निर्मुक्त हो एक हजार वर्ष जीता है ॥१८॥

शालूकचूर्णं भृङ्गाज्यं समध्वाज्यं शताब्दकृत् ॥
कटुतुम्बीतैलनस्यं कर्षं शतद्वयाब्दवान् ॥ १९ ॥

अर्थ— कमल अथवा कोकाबेरीकी जड़का चूर्ण, भमिराका रस और घृत सहत मिलाकर खानेसे एकसौ वर्षकी आयु होती है. करुई तोंबीके तेलकी धेलाभर नस्य लेनेसे दोसौ वर्षकी आयु होतीहै ॥ १९ ॥

त्रिफला पिप्पली शुण्ठी सेविता त्रिशताब्दकृत् ॥
शतावर्य्याः पूर्व्वयोगः सहस्रायुर्ब्बलातिकृत् ॥२०॥

अर्थ— त्रिफला, पिपरी, सोंठ इनके चूर्णके सेवन करनेसे तीनसौ वर्षकी आयु हो जातीहै. तथा सतावरिमें पूर्व्वोक्त औषधी मिलाकर खानेसे हजार वर्षकी आयु होतीहै और खूब वलको करदेतीहै ॥ २० ॥

चित्रकेण तथा पूर्व्वस्तथा शुण्ठी विडङ्गतः ॥
लोहेन भृङ्गराजेन बलया निम्बपञ्चकैः ॥२१॥
खदिरेण च निर्गुण्डया कण्टकार्य्याथ वासकात् ॥
वर्षाभुवा तद्रसैर्व्वा भावितं वटिकाकृतम् ॥२२॥

अर्थ— चीतकी जड़में पूर्व्वोक्त औषधी मिलाकर खानेसे पूर्व्वोक्त फल होताहै. तथा कांतीसार, भँगिरा, बरियारीकी जड़, नीमका पंचांग ॥ २१ ॥ गदा पुन्नाकी जड़, खैर, सम्हालू, कटैया, जड़, रूसकी जडसे इस चूर्णको गदापुन्नाके रससे भावित कर गोली बनावे ॥ २२ ॥

चूर्णं घृतैर्व्वा मधुना गुडाद्यैर्वारिणा तथा ॥
"ॐ ह्रूं स"इति मंत्रेण मंत्रितो योगराजकः॥२३॥
मृतसञ्जीवनीकल्पो रोगमृत्युंजयो भवेत् ॥

अर्थ— अथवा गोली न बनावे केवल चूर्णको घृतसे वा सहतसे वा गुडादिकोंसे वा जलसे खाय"ॐ ह्रूं सः"इसी मंत्रसे इस योगराजको अभिमन्त्रित करै ॥ २३ ॥ मृतसंजीवनीतुल्य और रोग मृत्यु इनके जीतनेवाला यह योगराज है॥

सुरासुरैश्च मुनिभिः सेविताः कल्पसागराः ॥२४॥

अर्थ— देवता दैत्य मुनि इनकरके कल्पसागर सेवित किये गये है २४ ॥

इत्याग्नेये महापुराणे कल्पसागरकथनं नाम षडशीत्यधिकद्विशततमोऽध्याय ॥ १२ ॥

वेदेषुनन्देन्दुमितेऽब्दके च राधे सिते शम्भुतिथौ समाप्तिम् ॥ आगात्कृतिर्वैद्यविनोदनीया त्प्रीत्यै भवानीभवयोस्तु भूयात् ॥ १ ॥

इन्द्रवज्रावृत्तम् ॥

पञ्चेषुनन्देन्दुमिते हि वर्षे शुक्ले नभोमासि रमेशतिथ्याम् ॥ श्री देवकीनन्दनसूनुनायं संशोधितः श्री रघुवंशनाम्ना ॥ १ ॥

समाप्तमिदमायुर्वेदखण्डम् ॥

वैद्यकग्रंथाः

	नाम	कि॰	डा॰म॰
१	अनुपाननाडीज्ञानतरंगिणी अतिउत्तम भाषाटीका	१-०	०-२
२	नैनसुखभाषा	०-२	०-॥
३	अमृतसागरकोशसहित भाषा	२-४	०-६
४	योगचिन्तामणि भाषाटीका	१-४	०-४
५	बृहद्बालबोधपाकावली भाषाटीका श्रीमन्माधवविरचित आयुर्वेदप्रकाशान्तर्गत जिस्में कूष्मांडपाकादि ७३ पाक सविधि वर्णित हैं	०-८	०-२
६	वैद्यसारशङ्कर भाषाटीका	०-४	०-१
७	वैद्यसर्वस्व भाषाटीका	०-४	०-१
८	शार्ङ्गधरनिदानसहित अतिउत्तमभाषाटीका	३-०	०-६
९	माधवनिदान भाषाटीका	२-०	०-६
१०	वैद्यकल्पद्रुम भाषाटीका जिस्में निदान, चिकित्सा, शोधन, मारण, इ॰सर्वसंग्रह है	५-०	०-१०
११	लोलिंबराज संस्कृत टीका और भाषाटीका	१-०	०-३
१२	औषधीप्रकाश व्याधिहरण भा. टी. ..	०-१०	०-२
१३	नपुंसकसंजीवनी भा. टी.	०-६	०-१
१४	रसराजमहोदय भा.	०-१२	०-३
१५	शालिहोत्र नकुलकृत भाषाटीकासहित ..	०-६	०-१
१६	अंजननिदान भाषाटीका	०-६	०-१
१७	रसमंजरी भाषाटीका	१-०	०-२
१८	हरीतक्यादि निघंटु भा. टी.	३-०	०-६
१९	चक्रदत्त (परमोत्तम सरल हिन्दीभाषा टीकासहित)	३-०	०-६

हरिप्रसाद भगीरथजी,

कालकादेवीरोड़ रामव [illegible] ंबई.